मन स्थिर नहीं होता तब तक हृदयमें ईश्वरका प्रकाश नहीं बढ़ता। निःश्वास प्रश्वासके साथ मन चञ्चल होता है, इस कारण योगिजन कुम्भक द्वारा मन स्थिर करके परमात्माका ध्यान करते हैं।

१३—जिसके भावरूपी घरमें कभी चोरी नहीं होती वही ईश्वर-लाभ करता है। अर्थात् केवल सरलभाव और विश्वास से ही ईश्वर प्राप्त किया जा सकता है।

१४—जैसे साँपको देखकर लोग उससे दूर भागते हैं, उसी प्रकार स्त्रियोंसे भी दूर रहना चाहिए। युवती स्त्रियोंको देख उन्हें माँ कहकर नमस्कार करना उचित है। उनके मुँहकी ओर न देखकर उनके चरणोंकी ओर देखना चाहिए। ऐसा करनेसे प्रलोभन और पतनकी आशंका न रहेगी।

१५—वैसे तो कामिनी-त्यागी बहुत होते हैं, किन्तु सच्चा त्यागी वही है जो एकान्त स्थानमें युवती स्त्रीको माँ कहकर चला जाय।

१६—जैसे बकरेका सिर धड़से जुदा कर देने पर भी कुछ समय तक हिलता रहता है, उसी प्रकार अभिमानकी जड़ भी मर जाने पर नहीं मरती।

१७—अभिमान-शून्य होना बड़ा कठिन है। जिस बर्तनमें प्याज़ या लहसुन का रस रक्खा जाता है, उसे हज़ार बार धोओ तोभी उसकी महक नहीं जाती। इसी प्रकार अभि-

वक्तव्य ।

महात्मा रामकृष्ण-परमहंसके नामको कौन नहीं जानता? उनका परिचय देना मानो सूर्य्यको दीपक दिखाना है। इस पुस्तकमें इन्हीं जगत्प्रसिद्ध महात्माजीके अमृतमय उपदेशोंका सङ्कलन किया गया है। बङ्गलामें "रामकृष्ण-उपदेश" नामकी एक छोटीसी पुस्तक है, उसके प्रायः सभी उपदेश इस पुस्तक में लिखे गये हैं। इसके सिवा पुस्तक लिखते समय परमहंस जीके कुछ उपदेश जो हमको अन्य पुस्तकोंसे मिले, वे भी हमने इसमें सम्मिलित कर दिये हैं।

देवरी (सागर) द्वितीय भाद्रपद शुक्ला पञ्चमी सं॰ १९७४	शिवसहाय चतुर्वेदी

सूचीपत्र ।

ईश्वर।

१—रात्रिके समय आकाश मण्डलमें असंख्य तारे चमकते हुए दिखाई देते हैं, किन्तु सूर्योदय होने पर एक भी तारा दिखाई नहीं देता, तो क्या यह कह सकते हैं कि दिनमें तारे नहीं रहते? अतएव हे मनुष्यो। अज्ञानवश परमात्माको न देख सकनेके कारण उसके अस्तित्वमें सन्देह मत करो।

२—समुद्रमें मोती अवश्य रहते हैं, किन्तु वे परिश्रमके विना नहीं मिलते। इसी प्रकार संसारमें ईश्वर विद्यमान रहने पर भी, वे विना प्रयासके नहीं मिलते।

३—भगवान् सबके भीतर कैसे विराजते हैं ? जैसे—चिकके भीतर बड़े घरोंकी स्त्रियां। वे तो सबको देखती हैं, किन्तु उनको कोई नहीं देख पाता। इसी प्रकार भगवान् हैं; वे तो सबको देखते हैं, किन्तु उनको कोई नहीं देखता।

४—कर्त्ता के बिना कर्म नहीं होता। जब हम किसी निर्जन स्थानमें देवादिकी मूर्त्ति देखते हैं, तब वहां मूर्त्ति-निर्म्मातांके उपस्थित न रहनेपर भी हमें उसके अस्तित्व की अनुमिति* होजाती है, उसी प्रकार इस विश्वको देखकर उसके निर्म्माता (ईश्वर) के अस्तित्व का ज्ञान होता है।

५—दूधमें मक्खन रहता है, किन्तु अज्ञान बालकोंको उसका ज्ञान नहीं रहता, तो क्या इसीलिए कह सकते हैं कि दूधमें मक्खन हो नहीं होता ?

६—साकार और निराकारका अन्तर जल और बर्फ के समान है। जल जब जमकर बर्फ बन जाता है तब वह साकार और जब वह गलकर पानी हो जाता है तब निराकार हो जाता है।

७—जो निराकार है वही साकार हो जाता है। जैसे महासागरमें अनन्त जल भरा रहता है, किन्तु वही जल कहीं-कहीं अधिक ठंड पाकर जम जाता है; उसी प्रकार भगवान् भक्तके भक्ति-हिमसे साकार रूप धारण करते हैं। फिर

* हेतु या तर्कसे किसी वस्तुको जानना।

सूर्योदय होनेपर जिस प्रकार बर्फ पिघलकर पहले के समान जलका जल हो जाता है, उसी प्रकार ज्ञानसूर्यके उदय होनेपर साकार रूप मिट जाता है और निराकार रह जाता है।

८—शक्तिके बिना ब्रह्मको पहचान नहीं होती। अथवा यों कहना चाहिये कि शक्तिके द्वारा ही ब्रह्मका अस्तित्व जाना जाता है।

९—बगीचेमें जब कोई फूल खिलता है तब उसकी सुगन्धि चारों ओर फैलकर उसका समाचार पहुँचाती है। उसी प्रकार शक्तिरूपी सौरभ पुष्परूपी ब्रह्मका ज्ञान कराता है।

१०—ब्रह्म और शक्ति एक ही वस्तु है। जब ब्रह्म निष्क्रिय अवस्थामें रहता है तब उसे शुद्ध ब्रह्म कहते हैं और जब वह सृष्टि, स्थिति, प्रलय आदि करता है तब उसे शक्ति कहते हैं।

११—अग्नि कहनेसे क्या बोध होता है? वर्ण, दाहिका शक्ति और उत्ताप। इन सबकी समष्टिको अग्नि कहते हैं। उसी प्रकार अनन्त शक्तियोंकी समष्टिको ब्रह्म कहते हैं। ब्रह्म और उसकी शक्ति पृथक् नहीं है।

१२—ईश्वर एक है, किन्तु उसके रूप अनन्त हैं। जैसे बहु-रूपी गिरगट। गिरगट समय-समयपर अनेक रङ्ग बदला करता है। कभी वह लाल हो जाता है, कभी पीला और कभी अन्य ही रङ्गका। कोई उसे किसी रंगका देखता है और कोई किसी रंगका। यदि ये सब लोग मिलकर उसकी चर्चा करें तो कोई उसे लाल रङ्गका बतलावेगा और कोई पीले या अन्य

रंगका। जिसने उसके जिस रंगको देखा होगा वह उसके उसी रङ्गको सच मानेगा, किन्तु जो गिरगट के सब रूपोंको जानता होगा वह कहेगा कि तुम सबका कहना सच है। गिरगट लाल भी होता है, पीला भी होता है और अन्य रङ्गका भी। इसी प्रकार परमेश्वरके भी अनेक रूप हैं। वह भक्त जिसने परमात्माका एकही रूप देखा है वह उसके उसी रूपको सत्य मानता है, किन्तु जो उसके अनन्त रूपोंका ज्ञाता है वह कह सकता है कि ये सब रूप उसी परमात्मा के हैं।
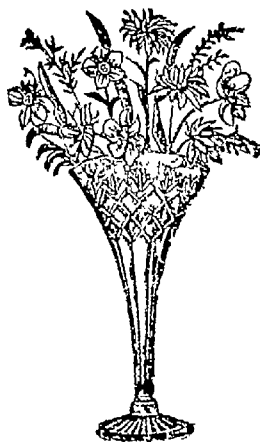
आत्मज्ञान।
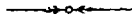
१—मनुष्य जब स्वतः—अपनेको पहचान लेता है, तब वह ईश्वरको भी पहचान सकता है। "मैं कौन हूँ?" इसका भली भाँति विचार करने पर जाना जाता है कि "मैं" या "हम" कहलानेवाला कोई पदार्थ नहीं है। हाथ, पाँव, आँख, नाक, रक्त, हाड़, माँस, मज्जा आदि मेंसे मैं कौन हूँ? प्याज़के छिलके छीलने पर जैसे केवल छिलके ही छिलके हो जाते हैं, शेष सार कुछ नहीं बचता, उसी प्रकार विचार करने पर "मैं" या "मेरा" कहने योग्य कुछ नहीं बचता।

२—एक व्यक्तिने परमहंसजीसे कहा—"मुझे ऐसा उपदेश दीजिये कि, जिससे एक ही बातमें ज्ञानोदय हो जाय।" परमहंसजीने उत्तर दिया—"ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या। बस ऐसी धारणा करलो।"

३—शरीर रहते हमारा ममत्व या मेरापन एकदम निःशेष नहीं हो सकता—कुछ न कुछ बनाही रहता है। जैसे नारियल या खजूरके पत्ते तो गिर जाते हैं, किन्तु वृक्षके पीड में उसके चिह्न बने रहते हैं। किन्तु यह सामान्य ममत्व मुक्तपुरुषों को आबद्ध नहीं कर सकता है।

४—नैंटा तोतापुरीसे परमहंसजीने पूछा कि तुम्हारी जैसी अवस्था है, उसमें तुम्हें नित्य ध्यान करनेकी क्या आवश्यकता।

है ? तोतापुरीने उत्तर दिया कि बर्तन यदि रोज़-रोज़ न माँजा जाय तो उसमें दाग़ पड़ जाते हैं, इसी प्रकार नित्य ध्यान न करनेसे चित्त अशुद्ध हो जाता है। परमहंसजीने कहा— यदि सोनेका बर्तन हो तो उसमें दाग़ नहीं पड़ सकते अर्थात् सच्चिदानन्द लाभ होने पर फिर साधनाकी आवश्यकता नहीं रहती।

५—जैसे पैरमें जूता पहनकर लोग स्वच्छन्दताके साथ काँटों पर से विचरण करते हैं, उसी प्रकार तत्त्वज्ञान प्राप्त होने पर मनुष्य इस कण्टकमय संसारमें निर्भय रह सकते हैं।

६—जो मनुष्य अल्ला-अल्ला चिल्लाता है, समझना चाहिये कि उसे अल्लाका दर्शन नहीं हुआ। क्योंकि जिस दिन मनुष्यको ईश्वर-दर्शन हो जाता है, उस दिन वह शान्त होकर अपने आपमें लीन हो जाता है।

७—कमलोंके खिलने पर भौंरे आपही आप उसकी ओर आने लगते हैं, इसी प्रकार आत्मजागृति होनेपर सब कुछ सिद्ध हो जाता है। रे मूर्ख ! क्या तुझे नहीं सुन पड़ता कि सोऽहं ! सोऽहं का नाद तेरे हृदयमें निनादित होरहा है ?

८—जब तक मनुष्यको "अजोनित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो, न हन्यते हन्यमाने शरीरे," का अनुभव नहीं होता; तब तक उसे संकट, दुःख और चिन्ताकी किस्तें भरनी ही पड़ती हैं।

९—एक साधु सदैव ज्ञानोन्माद अवस्थामें रहता था और कभी किसीसे अधिक बातचीत नहीं करता था। एक दिन

वह नगरमें भीख माँगनेके लिये गया और एक घरसे भिक्षामें उसे जो अन्न मिला उसे वह वहीं बैठकर खाने लगा और साथमें कुत्तेको भी खिलाने लगा। यह देख अनेक लोग वहाँ जुड़ गये और उनमेंसे कोई-कोई उसे पागल कहकर उसका उपहास करने लगे। यह देखकर साधुने उनलोगोंसे कहा—तुम हँसते क्यों हो ?

विष्णु परिस्थितो विष्णुः
विष्णु खादति विष्णवे।
कथ हससि रे विष्णो
सर्व्वं विष्णुमय जगत्॥

माया।

१—मायाका स्वभाव कैसा है? जैसे जलकी काई। हाथके द्वारा जलको हिलानेसे काई हट जाती है और जल निर्मल दीखने लगता है, किन्तु कुछ समयके बाद ही वह फिर छा जाती है। उसी प्रकार जबतक विचार करो—सत्संग करो, तब तक बुद्धि निर्मल रहती है, किन्तु कुछ समयके उपरान्त विषय-वासनायें आकर फिर उसपर आवरण फैला देती हैं।

२—साँपके मुखमें विष रहता है, किन्तु वह उसे स्वतः नहीं लगता, दूसरों को ही लगता है। उसी प्रकार भगवान्‌की माया, स्वतः भगवान्‌को मोहित नहीं करती—दूसरोंको मोहित करती है।

३—जीवात्मा और परमात्माके बीचमें एक मायाका पर्दा पड़ा हुआ है। जब तक यह पर्दा या आवरण नहीं हटता तब तक दोनोंका साक्षात् नहीं होता। जैसे आगे राम, पीछे लक्ष्मण और बीचमें सीता। यहाँ राम परमात्मा और लक्ष्मण जीवात्मा स्वरूप हैं, जानकी बीचमें मायाके आवरणके समान हैं। जब तक जानकी बीचमें रहती हैं तब तक लक्ष्मण रामको नहीं देख सकते, किन्तु ज्योंही जानकी बीचसे हट जाती हैं त्योंही लक्ष्मण रामको देखते हैं।

४—माया दो प्रकारकी है—विद्या और अविद्या। इनमेंसे विद्यामायाके दो भेद हैं—विवेक और वैराग्य। अविद्या माया ६ प्रकारकी है—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य्य। अविद्या माया "मैं" "मेरा" आदि ज्ञानसे मनुष्योंको आवृत करती है किन्तु विद्यामाया उसे छिन्न-भिन्न कर देती है।

५—जब तक जल गदला रहता है तब तक उसमें सूर्य, चन्द्रका प्रतिबिम्ब ठीक-ठीक नहीं दिखाई देता है, वैसेही जब तक माया अर्थात् मैं और मेरा का ज्ञान बना रहता है तब तक आत्मदर्शन नहीं होता है।

६—सूर्य पृथ्वीको प्रकाशित करता है, किन्तु जब एक सामान्य मेघ-खण्ड उसके नीचे आजाता है तब हमको उसके दर्शन नहीं होते हैं, इसी प्रकार सर्वसाक्षीभूत सच्चिदानन्द को हमलोग मायावश नहीं देख पाते हैं।

७—किसी काई वाले सरोवरमें जाकर उसकी काई हटा दो, तो कुछ समयके पश्चात् वह फिर छा जाती है। माया का स्वभाव भी ऐसा ही है। बारम्बार हटा देने पर भी वह फिर-फिर आकर हमारी बुद्धिको ढँकती है। हाँ, यदि काईको हटाकर लकड़ी बाँस आदिके द्वारा चारों ओर से घेरा डाल दिया जाय तो फिर उसके घेरेके भीतर काई नहीं आती है और वहाँ केवल निर्मल जल भरा रहता है। इसी प्रकार एक बार मायाका आवरण हटानेपर ज्ञान और भक्तिका घेरा डाल

दिया जाय तो फिर माया उस घेरेके भीतर नहीं जा सकती है—वहाँ केवल शुद्ध सच्चिदानन्दका प्रकाश रहता है।

८—दक्षिणेश्वरके मन्दिरमें नौबतखाने पर एक साधु कुछ दिन ठहरा था। वह किसीसे अधिक बातचीत नहीं करता था और सर्वदा ध्यान धारणामें मग्न रहता था। एक दिन सहसा मेघ उठे और चारों ओर अन्धकार छा गया। कुछ समयके पश्चात् एक प्रबल आँधी आई और वह मेघोंको उड़ा लेगई। यह देख साधु खूब हँसने-कूदने लगा। साधुको हँसते कूदते देखकर परमहंसजीने पूछा—तुम तो नित्य भीतर चुपचाप बैठे रहते हो, किन्तु आज इस प्रकार आनन्दमें मग्न क्यों हो रहे हो? साधुने उत्तर दिया—"संसारकी माया ही ऐसी है। पहले आकाश स्वच्छ था, फिर सहसा मेघोंने आकर अन्धकार मचा दिया, प्रबल आँधी चली और मेघोंको उड़ा ले गई। आकाश फिर पहलेके समान साफ़ हो गया।"

अवतारी पुरुष ।

१—नदीमें जब बड़े-बड़े शहतीर बहते हैं तब उन पर कई आदमी मज़ेके साथ बैठ जाते हैं और पार लग जाते हैं। किन्तु क्षुद्र लकड़ी पर एक कौआ भी आकर बैठ जाय तो वह तुरन्त डूब जाती है। इसी प्रकार जब अवतारी पुरुष जन्म ग्रहण करते हैं तब उनके आश्रयसे सहस्रों पुरुष तर जाते हैं।

२—रेलका एँजिन स्वतः चलता है और मालसे भरी हुई अनेक गाड़ियोंको भी खींच ले जाता है। इसी प्रकार अवतारी पुरुष हज़ारों स्त्री-पुरुषोंको ईश्वरकी ओर खींच ले जाते हैं।

३—राम, कृष्ण, बुद्ध आदि सभी अवतार मनुष्य थे। यदि मनुष्य न होते तो लोग उनपर अपनी धारणा न रख सकते।

जीवोंकी अवस्थामें भेद।

१—गायें कई रङ्गकी होती हैं। कोई काली, कोई लाल, कोई कबरी और कोई सफेद, किन्तु उन सबसे एक ही प्रकारका अर्थात् सफेद दूध निकलता है। इसी प्रकार कोई मनुष्य देखनेमें सुन्दर, कोई काला, कोई साधु और कोई असाधु दिखाई देता है, किन्तु उन सबके भीतर एकही ईश्वरका निवास है।

२—सज्जन और दुर्ज्जन हंस और जोंकके सदृश हैं। हंस दूधको पीता और पानीको त्याग देता है, किन्तु जोंक स्तनमें लगने पर भी रक्तको पीती और दूधको त्यागती है। कहनेका मतलब यह है कि, सज्जन, गुणग्राही और दुर्जन दोषग्राही होते हैं।

३—दो प्रकारकी मक्खियाँ हैं। एक तो मधुमक्खियाँ, जो केवल मधुपान ही करती हैं और दूसरी साधारण मक्खियाँ जो मधुपान भी करती हैं, किन्तु जब उन्हें पका घाव या व्रण मिल जाता है तब वे मधुको छोड़कर व्रण पर जा बैठती हैं। उसी प्रकार दो प्रकृतिके मनुष्य हैं—एक तो ईश्वरानुरागी और दूसरे संसारासक्त। जो ईश्वरानुरागी हैं वे ईश्वराराधनके सिवा और कोई कार्य नहीं करते, और जो संसारासक्त हैं वे

ईश्वरकी आराधना तो करते हैं, किन्तु जब उन्हें कामिनी-काञ्चनकी सुधि आती है तब वे हरिकीर्तनको छोड़कर उसीमें मग्न हो जाते हैं।

४—बद्धजीव न तो स्वतः ही हरिनाम सुनते हैं और न दूसरों को सुनने देते हैं। वे धर्म और धार्मिकोंकी निन्दा करते हैं और यदि कोई भजन-पूजन करे तो वे उसकी हंसी उड़ाते हैं।

५—कछुए की पीठ पर तलवार मारो तो उसकी धार भले ही नष्ट हो जाय,पर उस पर कुछ असर नहीं होता,इसी प्रकार बद्धजीवोंको कितनाही धर्म वा नीतिका उपदेश दो, पर उनपर उसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ता।

६—सूर्यकी किरणें सब जगह समान पड़ती हैं, किन्तु पानी, कांच और स्वच्छ पदार्थोंमें उनका अधिक प्रकाश दिखाई देता है। इसी प्रकार परमेश्वरका अंश सब जीवोंमें समान रूपसे व्याप्त रहनेपर भी साधु पुरुषोंमें उसका विशेष प्रकाश दिखाई देता है।

७—संसारी मनुष्य उस तोतेके समान हैं जो सदैव राधे-कृष्ण राधेकृष्ण रटा करता है, परन्तु जब उसे बिल्ली पकड़ती है तब टेंटेंके सिवा उससे कुछ कहते नहीं बनता। इसी प्रकार संसारी मनुष्य सुख-शान्तिके समय धर्मकर्म और परमेश्वरकी चर्चा किया करते हैं, किन्तु विपत्तिके समय उनसे कुछ नहीं बन पड़ता।

८—बाघके भीतर भी ईश्वर है किन्तु उसके सम्मुख जाना उचित नहीं। इसी प्रकार दुर्जनोंमें भी परमात्माका निवास है किन्तु उनका साथ करना अच्छा नहीं है।

९—एक गुरुने अपने शिष्यको उपदेश दिया कि, ईश्वर सब सचराचर जीवों में व्याप्त है। शिष्यने यह बात ध्यान में रखली। एक दिन रास्तेमें एक मस्त हाथी चला आ रहा था। महावतने उक्त शिष्यसे रास्ता छोड़ देने को कहा। किन्तु उसने सोचा कि मैं भी ईश्वर हूँ और हाथी भी ईश्वर है फिर मुझे हाथीसे डरनेकी क्या ज़रूरत है? यह सोच, शिष्य वहीं खड़ा रहा। अन्तमें हाथीने पास आकर सूँड से उठा उसे फेंक दिया। शिष्य राम को बहुत चोट आई। उसने गुरुके पास जाकर सब हाल कह सुनाया। गुरुने कहा—यह सच है कि हाथी भी ईश्वर है और तुम भी ईश्वर हो, किन्तु ऊपरसे महावत ईश्वर भी तो तुमको सावधान कर रहा था। तुमने उसकी बात क्यों नहीं सुनी?

१०—जलमें कंकड़ फेंको या उसे किसी तरह चञ्चल करो, तो कुछ समयके पश्चात् वह फिर स्थिर हो जाता है। सत्पुरुषोंका क्रोध भी इसी प्रकार होता है। कोई उनके मनमें क्रोध पैदा कर दे तो वह कुछ समयके बाद शान्त हो जाते हैं।

११—ब्राह्मणके घर जन्म लेनेसे सब ब्राह्मण हो कहलाते हैं, किन्तु उनमें से कोई पण्डित होता है, कोई मन्दिरका

पुजारी होता है, कोई रसोइया होता है और कोई वेश्याका भक्त होता है।

१२—जैसे कसौटी पर कसनेसे सोने या पीतल की परीक्षा हो जाती है, उसी प्रकार ईश्वरके निकट सरलता अथवा कपटाचारिताकी परीक्षा सहज ही हो जाती है।

१३—मनुष्य दो प्रकारके है—मनुष्य और मनहुस। जो ईश्वरके लिए व्याकुल हैं वे मनहुस कहलाते हैं अर्थात् उनके मनमें होश या ज्ञान हो गया है। और जो कामिनी-काञ्चनमें लिप्त हैं वे साधारण मनुष्य हैं।

१४—संसारी जीव किसी बातसे सचेत नहीं होते हैं। उन्हें कितना ही दुःख, परिताप या संकट क्यों न भोगना पड़े परन्तु वे उससे तनिक भी सावधान नहीं होते हैं। जैसे ऊँट कँटीले झाड खानेका रुचिया होता है, कँटीले पेड़ खाते-खाते उसके मुँहसे रक्त बहने लगता है, तथापि वह उनका खाना नहीं छोड़ता है। इसी प्रकार संसारी लोग अनेक कष्ट और दुःखोंको सहकर भी ससारसे ज़रा भी विरक्त नहीं होते हैं।

१५—एक मेंडक कुएमें रहता था। वह वहीं पैदा हुआ और वहीं बड़ा हुआ था। कुएके बाहर भी कुछ है, इसकी उसे कुछ खबर नहीं थी। एक दिन उसके पास एक समुद्रका मेंडक आया। बातों ही बातों में कुएके मेंडकने पूछा—"भाई! तुम्हारा समुद्र कितना बड़ा है?" उसने

उत्तर दिया कि—"बहुत बड़ा।" इस पर उसने अपनी दोनों टाँगें फैलाकर कहा—"क्या तुम्हारा समुद्र इतना बड़ा है?" समुद्रके मेंडकने कहा—"इससे बहुत बड़ा है।" इस बार कूपमंडूक कुए के एक छोरसे दूसरी छोर तक गया और कहने लगा कि क्या तुम्हारा समुद्र इससे भी बड़ा है? समुद्रके मेंडकने कहा—"मित्र! भला समुद्र और कुए की समता कैसे हो सकती है, समुद्र समुद्र हो है और कूप कूप ही।" इस पर भी कुएके मेंडक को विश्वास नहीं हुआ। वह बोला—"क्या इस कुएसे भी बढ़कर कोई वस्तु हो सकती है?" बस, यही दशा उन अज्ञानियोंकी है, जिन्होंने कुछ देखा सुना नहीं है और जो समझते हैं कि जो कुछ हमने देखा है उससे बढ़कर संसारमें कुछ नहीं है।

गुरु ।

१ गुरु एकही होता है, किन्तु उपगुरु अनेक हो सकते हैं। जिसके पाससे कुछ शिक्षा ग्रहण की जाय, उसे उपगुरु कहते हैं। भागवतमें लिखा है कि, दत्तात्रेयने इसी प्रकार २४ उपगुरु किये थे।

२ एक दिन दत्तात्रेयजीने देखा कि सामने रास्तेसे किसी बड़े आदमीकी बरात धूमधामके साथ आ रही है। बड़ा कोलाहल मच रहा था। बाजों की ध्वनि से कानोंके पर्दे फटे जाते थे। जिस रास्तेसे बरात जा रही थी, उसीके समीप एक व्याध अपने लक्ष्यकी ओर ध्यान लगाये बैठा था। बरात निकल गई। कुछ समयके पश्चात् एक आदमीने आकर व्याधसे पूछा—"भाई! यहाँ से एक बरात निकली है?" व्याधने उत्तर दिया—"मुझे नहीं मालूम।" व्याध अपनी शिकार की ओर इतनी एकाग्रतासे ध्यान लगाये बैठा था कि उसके सामने से बरात निकल गई, किन्तु उसे कुछ खबर नहीं हुई। यह देख दत्तात्रेयजी ने उसे नमस्कार करके कहा—"आजसे आप मेरे गुरु हुए। अब मैं जब भगवान्‌के ध्यान के लिए बैठूँगा तब इसी प्रकार एकाग्र मनसे ध्यान करूँगा।"

३—एक धीवर मछली पकड़ रहा था। दत्तात्रेयजीने

उसके पास जाकर पूछा—"भाई ! अमुक गाँवके लिए किस मार्गसे जाऊँ ?" धीवरने कुछ उत्तर नहीं दिया। उस समय उसके जालमें मछली फँस रही थी। वह उसीकी ओर ध्यानपूर्वक देख रहा था। जब मछली फँस गई तब उसने कहा—"आप क्या पूछते थे ?" दत्तात्रेयने प्रणाम करके कहा—"आप मेरे गुरु हुए। आजसे जब मैं किसी कामको करूँगा तब काम पूरा होने तक मनको अन्य ओर न जाने दूँगा।"

४—एक चील अपने मुखमें मछली दबाये जा रही थी। उसे देखकर दूसरी सैकड़ों चीलें और कौए उसके पीछे लग गये और उसके मुँहमें दबी हुई मछलीको छुड़ानेकी चेष्टा करने लगे। वह चील जहाँ जाती,अन्य सब चीलें और कौए भी काँव-काँव करते हुए उसके पीछे-पीछे दौड़ते थे। अन्तमें विरक्त होकर उसने अपने मुँह की मछली छोड़ दी और दूसरी चील उस मछलीको लेकर भागी। अब सब चील और कौए पहली चीलको छोड़कर दूसरी चीलके पीछे लग गये। पहली चील निश्चिन्त होकर एक वृक्ष पर जा बैठी। दत्तात्रेयने उस चीलकी निरापद अवस्था को देखकर कहा—"इस संसारमें उपाधि त्यागनेसेही शान्ति मिलती है, अन्यथा महाविपत्ति है।"

५—किसी सरोवर में एक बगुला एक मछलीको लक्ष्य करके धीरे-धीरे उसकी ओर पैर बढ़ा रहा था। पीछे एक

व्याध बगुलेको ताकमें बैठा था। परन्तु इस व्याधको उसे कुछ खबर नहीं थी। वह एकाग्रचित्तसे मछली की ओर देख रहा था। यह देखकर दत्तात्रेयने उसे प्रणाम करके कहा—"तुम मेरे गुरु हो। आजसे जब मैं ध्यान करनेके लिए बैठूँगा तब तुम्हारे ही समान एकही ओर अपना लक्ष्य रक्खूँगा—अन्य सब बातोंको भूलजाऊँगा।"

६ गुरु लाखों मिलते हैं, किन्तु चेला एक मिलना भी कठिन है। अर्थात् उपदेष्टा अनेक हैं किन्तु उपदेशके अनुसार चलने वाले कोई विरलेही होते हैं।

७ वैद्य तीन प्रकारके होते हैं। उत्तम, मध्यम और अधम। जो वैद्य केवल औषध देकर चला जाता है, रोगीने औषध खाई या नहीं इत्यादि बातोंकी परवा नहीं करता वह अधम वैद्य है, जो वैद्य रोगीके औषध न खाने पर दवाके गुण बतलाकर वा अनेक मीठी-मीठी बातों द्वारा औषध खिलाता है वह मध्यम वैद्य है, और जो वैद्य रोगीके इँकार करने पर भी उसके हितके लिए बलपूर्व्वक औषध खिलाता है वह उत्तम वैद्य है। इसी प्रकार जो गुरु या आचार्य केवल धर्म-शिक्षा देकर रह जाता है वह अधम गुरु है, जो शिष्यकी भलाई के लिए उसे बार-बार समझाता है—सचेत करता है वह मध्यम है और जो शिष्यको अपने उपदेश के अनुसार आचरण करते न देख कर बलपूर्व्वक धर्ममार्ग पर आरूढ़ कराता है वह उत्तम गुरु है।

धर्म ।

१—जब तक सच्चिदानन्दका साक्षात्कार नहीं हुआ, तभी तक धर्म-विचार करनेकी आवश्यकता है। जैसे भ्रमर मधु-पान करनेके लिए जब तक पद्म पर नहीं बैठता तभी तक भन-भनाता रहता है, जब वह पद्म पर बैठकर मधुपान करने लगता है तब एकदम चुप हो जाता है—मुँह से एक भी शब्द नहीं निकलता।

२—एक दिन स्वर्गीय महात्मा केशवचन्द्र सेनने दक्षिणेश्वरके मन्दिरमें जाकर परमहंस जी से पूछा—"अनेक पण्डित बड़े बड़े शास्त्र-पुराण पढ़ते हैं, किन्तु उनको ज्ञान कुछ भी नहीं होता। इसका क्या कारण है?" परमहंसजीने उत्तर दिया—जिस प्रकार गिद्ध-चील आदि पक्षी आकाशमें उड़ तो बहुत ऊँचे तक जाते हैं, किन्तु (ऊपर जाकर भी) उनकी दृष्टि सदैव पृथ्वी परके माँस आदि गन्दी वस्तुओंकी ओर ही लगी रहती है। इन पण्डितों की भी ऐसी ही दशा है। वे पढ़ते तो बड़े-बड़े शास्त्र हैं, परन्तु उनका मन सदैव कामिनी-काञ्चन की ओर लगा रहता है। इसी कारण वे यथार्थ ज्ञानसे कोसों दूर रहते हैं।

३—जैसे खाली बर्तन जलमें डुबोनेसे भक्-भक् शब्द

होता है, किन्तु जब वह भर जाता है तब उससे शब्द नहीं निकलता। इसी प्रकार जब तक मनुष्य को ईश्वर-लाभ नहीं होता तब तक वह अनेक प्रकारके तर्क और वाद-विवाद करता है, किन्तु जब उसको ईश्वर-लाभ हो जाता है तब वह स्थिर होकर ईश्वरानन्दका उपभोग करने लगता है।

४—विवेक और वैराग्य के बिना न तो शास्त्रका मर्म ही समझ में आता है और न धर्म-लाभ ही होता है। सत् और असत् का विचार करना तथा देह और आत्माको भिन्न समझना ही विवेक है। विषयोंसे अलिप्त रहनेको वैराग्य कहते हैं।

५—पञ्चाङ्गोंमें वर्षाके विषयमें बहुत कुछ भविष्य वाणी लिखी रहती है, किन्तु पञ्चाङ्गोंको निचोड़ने से एक बूँद भी जल नहीं निकलता। इसी प्रकार पुस्तकोंमें अनेक धर्म-कथायें लिखी रहती हैं, किन्तु उनको पढ़ लेने से ही कोई धार्मिक नहीं बन सकता है। उनके उपदेशानुसार आचरण करने से ही धार्मिक हो सकता है।

६—जैसे बाज़ारके बाहर खड़े होनेसे केवल एकही प्रकारका हो-हो शब्द सुनाई देता है, उसका अर्थ कुछ समझमें नहीं आता, किन्तु भीतर जाते ही वह हो-हो शब्द स्पष्ट रूपसे समझमें आने लगता है, इसी प्रकार धर्म जगत् के बाहर रह कर कोई धर्म-भावको नहीं समझ स[illegible]।

७—सब चीज़ें उच्छिष्ट हैं, केवल एक ब्रह्म ही आजतक उच्छिष्ट नहीं हुआ। वेद पुराणादि कई बार मनुष्यों के मुखसे निकल कर उच्छिष्ट हो चुके हैं, किन्तु ब्रह्म क्या वस्तु है इसे कोई आज तक अपने मुँहसे नहीं कह सका।

८—दो मनुष्य किसी बग़ीचे में गये। इनमें से जो मनुष्य अपने को अधिक बुद्धिमान समझता था वह वहाँ जाकर आमके पेड गिनने लगा,—कौन पेड़में कितने फल लगे है, उनकी क्या क़ीमत होगी, इत्यादि बातों पर विचार करने लगा। दूसरा मनुष्य जो सीधा था, वह बगीचेके मालिक के पास गया और उसकी आज्ञा लेकर बग़ीचेके आम खाने लगा। अब कहिये इन दोनोंमें कौन बुद्धिमान है ? आम खाने से तो पेट भरता है, पर पत्ते गिनने से क्या लाभ ? इसी प्रकार अज्ञानी मनुष्य व्यर्थ वाद विवाद और झगडोंमें पड़े रहते हैं, किन्तु ज्ञानी पुरुष भगवत्कृपा प्राप्त करके इस संसाररूपी बग़ीचेमें ब्रह्मानन्द रूपी मधुर फल खाते हैं।

९—चार अन्धे स्पर्श द्वारा हाथीका ज्ञान प्राप्त करने के लिए गये। एकने उसका पैर टटोला और कहने लगा कि हाथी खंभेके समान है। दूसरे ने उसकी सूँड पकड़ी और कहने लगा कि हाथी डालीके समान है। तीसरे ने उसका पेट टटोला और कहने लगा कि हाथी ढालके समान है। चौथेने उसका कान पकडा और कहने लगा, कि हाथी सूपके समान है। इस प्रकार चारो अन्धे उसके स्वरूप के विषयमें झगड़ने

लगी। इतनेमें एक पथिक वहाँ से निकला। उसने इनको आपसमें झगड़ते हुए देखकर पूछा—भाई! तुम लोग किस लिए झगड़ रहे हो? चारोंने सब वृत्तान्त कह सुनाया। उस पथिकने कहा—तुम चारोंमें से किसी एकने भी हाथीके पूर्ण स्वरूपको नहीं जाना है। हाथी खंभेके समान नहीं, किन्तु उसके पैर खंभेके समान होते हैं। वह डालीके समान नहीं, वरन् उसकी सूँड डाली के समान होती है। वह ढोलके समान नहीं, वरन् उसका पेट ढोलके समान होता है। वह सूपके समान नहीं, किन्तु उसके कान सूपके समान होते हैं। इन सबके मेलसे जो स्वरूप बनता है, वही हाथीका पूर्ण स्वरूप है। पूर्ण स्वरूपका ज्ञान होते ही चारों अन्धोंका विवाद मिट गया। जब तक परमात्माके शुद्ध स्वरूपका ज्ञान नहीं होता, तब तक मनुष्य भिन्न-भिन्न मतोंमें पार्थक्य देखता है, किन्तु ज्योंही उसे परमात्माके शुद्ध स्वरूपका ज्ञान हो जाता है, त्योंही वह भिन्न-भिन्न मतोंको उसके अङ्गस्वरूप समझने लगता है।

संसार और साधना।

१—आँखमिचौली खेल खेलते समय जो बुढ़ियाको छू लेता है, वह चोर नहीं होता। इसी प्रकार इस संसारमें जो परमात्माके चरणोंका आश्रय ग्रहण करता है, वह साँसारिक बन्धनोंसे नहीं बँधता। जो बुढ़ियाको छू लेता है उसे फिर चोर बनानेका कोई उपाय नहीं, इसी प्रकार जो ईश्वरका आश्रय ग्रहण करते है वे फिर संसारी नहीं बन सकते—उन पर विषय-वासनाओंका कुछ वश नहीं चलता।

२—धीवर मछलियाँ पकड़ने के लिए जो जाल फैलाते हैं उसके चारों किनारों पर सीपें लगी रहती हैं। पानीके भीतर वे खूब चमकती हैं। मछलियाँ इन सीपोंको चमक-दमक को देखकर आनन्दमें मग्न हो जालके भीतर चली जाती हैं। एकबार जालके भीतर गई कि फिर उससे निकलना कठिन हो जाता है और आखिर उनको वहीं प्राण देना पड़ता है। किन्तु कोई-कोई मछलियाँ सीपोंके पास तक आकर और कुछ समझ-सोचकर दूर भाग जाती हैं। इसी प्रकार संसारकी वाह्य चमक-दमकको देखकर अनेक लोग उसमें फँस जाते हैं और माया-मोहके चक्करमें पड़कर अनेक कष्ट उठाते हैं,किन्तु

कोई कोई पुरुष संसारकी वाह्य चमक-दमक में न भूल कर उससे दूर भाग जाते हैं और माया-मोह के बन्धन से बच जाते हैं।

३—नदीमें जाल फेंकने से उसमें मछलियाँ सहज ही घुस आती हैं। मूर्ख मछलियाँ उस जालके भीतर आनन्दके साथ घूमती फिरती हैं, किन्तु कुछ समयके उपरान्त धीवर जब उस जालको उठाता है तब वे उसमें तड़फ-तड़फकर मर जाती है। यद्यपि जाल से निकलना कठिन है, तथापि कोई-कोई मछली अपने को फँसी समझ कर उससे निकलनेकी चेष्टा करती है तो कभी-कभी निकल भी जाती है। क्योंकि जालके सब छिद्र समान नहीं होते हैं, ढूँढ़ने पर एकाध बड़ा छिद्र भी मिल जाता है और वह उसमें से निकल भागती है। इसी प्रकार यह संसार है। एक बार इसमें फँस जाने पर इससे छूटना महान् कठिन है। किन्तु विशेष प्रयास करने पर कोई-कोई व्यक्ति इससे मुक्त हो जाते हैं। परन्तु जब कभी भगवान्‌की कृपा होती है तो जाल टूट जाता है और सब मछलियाँ बच जाती हैं। इसी प्रकार जब कोई अवतार होता है तब समस्त जीवोंका कल्याण हो जाता है।

४—एक व्यक्तिने पूछा—"संसार में रहकर ईश्वरकी उपासना करना क्या सम्भव है?" परमहंसजीने उत्तर दिया—"तुमने स्त्रियोंको धान कूटते देखा है? वे एक हाथ से मूसल पटकती और दूसरेसे ओखली के धानको ठीक करती जाती

४

हैं। बीचमें जब उनका बच्चा आजाता तो उसे स्तन पिलातीं या अन्य कोई व्यक्ति आजाता है तो उसके साथ बातचीत करती जाती हैं, किन्तु उनका ध्यान सदैव मूसल की गतिकी ओर रहता है। यदि ज़रा ध्यान टूटे तो मूसलसे हाथ चूर-चूर हो जाय। इसी प्रकार संसारमें रहकर सब काम करते रहो, किन्तु मन ईश्वरकी ओर लगाये रहो। उसकी ओरसे ध्यान हटाने ही से सब अनर्थ होते है।

५—संसारमें रहकर जो साधना करता है वही वीर साधक है। जैसे वीर पुरुष माथे पर बोझा रखकर अन्य ओर भी देख सकता है, उसी प्रकार वीर साधक इस संसार का बोझा मस्तक पर रक्खे रहने पर भी ईश्वरकी ओर देखता है।

६—ढोलवाला जैसे दोनों हाथोंसे दो रकमका बाजा बजाता और मुँहसे गाना गाता है,उसी प्रकारसे संसारी जीव! तुम हाथोसे सब काम करो, किन्तु मुँह से ईश्वरका नाम लेने में मत भूलो।

७—जैसे कुलटा स्त्री स्वजन-परिवारमें रह कर घरके सब काम करती है किन्तु उसका मन अपने उपपति (यार)की ओर ही लगा रहता है। वह निरन्तर उससे भेट होनेके लिए व्याकुल रहती है, इसी प्रकार तुम भी सांसारिक काम करते समय निरन्तर इश्वरकी ओर मन लगाये रहो।

८—यह संसार रेशमके कच्चे कुसेरेके समान है। जीव उसका कीड़ा है। जीव चाहे तो उसे काट भी सकता है

ओर उसके भीतर भी रह सकता है। कुसैरेका मुँह कटा रहनेसे कीड़ा स्वेच्छा से जब चाहे बाहर निकल सकता है। इसके सिवा कटे हुए कुसैरेको—कामका न रहनेके कारण—कोई ले भी नहीं जाता। इसी प्रकार जो जीव तत्त्वज्ञान प्राप्त करके संसारमें रहते हैं, उन्हें कोई बन्धन नहीं रहता है। वे स्वेच्छासे उसे जब चाहे तब परित्याग कर सकते है।

८—संसारमें भी निर्लिप्त भावसे रह सकते है। जैसे पानीमें कमल-पत्र रहता है, परन्तु उसमें पानी नहीं भिदता, इसी प्रकार त्यागी पुरुष संसार में तो रहते है, किन्तु उनको संसारका माया-मोह नहीं व्यापता।

१०—तराज़ूका पल्ला जिस ओर भारी हो जाता है उसी ओर झुक जाता है और जिस ओर हलका हो जाता है उस ओर ऊपर उठ जाता है। मनुष्यका मन भी तराज़ूके पल्लोंके समान है। उसके एक ओर संसार और एक ओर भगवान् है। जब सांसारिक यश, कामना आदि का भार बढ़ जाता है तब मन भगवान् की ओरसे उठकर संसारकी ओर झुक जाता है। और जब भक्ति, विवेक, वैराग्य आदिका भार बढ़ जाता है तब मन संसार की ओरसे उठकर भगवान् की ओर झुक जाता है।

११—एक मनुष्यने खेत सींचनेके लिए दिन भर रहँट चलाया, किन्तु जब सन्ध्या समय खेतमें जाकर देखा तो उसमें एक बूँद भी जल नहीं पहुँचा था। खेतके पास कुछ गड्ढे

थे, उनमें सब जल चला गया। इसी प्रकार जो मनुष्य विषय-वासनाओं और सांसारिक मान-सम्भ्रममें पड़कर साधना करते हैं, उनकी सब साधना व्यर्थ जाती है। जन्मभर ईश्वरोपासन करनेके उपरान्त अन्तमें जब वे देखते हैं तब उन्हें विदित होता है कि उनकी सारी उपासना वासनारूपी गड्ढोंमें बह गई है।

१२—जैसे बालक दीवार पकड़ कर दूर तक चला जाता है, किन्तु उसका मन सदैव दीवार ही की ओर रहता है। क्योंकि वह जानता है कि मैं दीवार छोड़ते ही गिर पड़ूँगा। संसार भी इसी प्रकार का है। तुम भगवान् की ओर लक्ष्य रख कर सब काम करो, तुम्हें कुछ भय न रहेगा। अर्थात् निरापद रहनेके लिए ईश्वराश्रय न छोड़ना चाहिए।

१३—जलमें नौका रहने से हानि नहीं, किन्तु नौकाके भीतर जल न जाना चाहिए, क्योंकि उसके भीतर जल भरने से वह डूब जाती है। इसी प्रकार साधकों को संसार में रहने से भय नहीं, किन्तु उनके मनमें सांसारिक भावोंका प्रवेश न होना चाहिए, अन्यथा महाविपद् है।

१४—संसार आँवलेके समान है। आँवला देखने में सुन्दर होने पर भी अन्तःसारशून्य होता है। इसी प्रकार संसार भी बाहरसे देखने में बहुत सुन्दर और सुखदाई प्रतीत होता है, किन्तु वास्तवमें वह आँवले के समान सारःशून्य है।

१५—जैसे कटहर काटनेके पहले हाथमें तेल मल लेनेसे हाथोंमें उसका लासा नहीं लगता, उसी प्रकार संसार-रूपी कटहरका उपभोग करते समय मनमें ज्ञानरूपी तेलकी मालिश कर लेनेसे फिर कामिनी-काञ्चन का लासा नहीं लगता है।

१६—सांपको पकड़ो तो वह उसी समय काट खाता है, किन्तु जो मनुष्य उसका मन्त्र जानता है वह सैकड़ों सांपोंको सहज ही पकड़ लेता है। इसी प्रकार जो मनुष्य विवेक और वैराग्यरूपी मन्त्र जानता है वह संसारमें रहकर भी विषय-वासनाओंमें लिप्त नहीं होता है।

१७—मनुष्यके मनका छुपा भाव उसकी बातोंसे बाहर निकल आता है। जैसे भोजनके साथ जो लोग मूली खाते हैं उनकी डकारमें मूली की गन्ध आती है।

१८—मन ही सब कामोंका कर्त्ता है। ज्ञान और अज्ञान ये उसकी दो अवस्थायें हैं। मन ही बन्धन या मोक्षका कारण है। मनुष्य मन ही से सुखी दुखी, साधु असाधु, भले-बुरे और पापी तथा पुण्यात्मा होते हैं। अतएव मनकी वृत्ति सुधारना ही आत्मसुधार करना है।

१९—एक पक्षी किसी जहाजके मस्तूलपर बैठा था। उसे चारों ओर अनन्त जल-ही-जल दिखाई देता था। कई दिन तक वह उसी मस्तूल पर बैठा रहा। एक दिन उसने सोचा कि मैं इस मस्तूलको ही अपना एकमात्र आश्रय

समझ बैठा हूँ, उड़ कर देखूँ, शायद आस-पास कोई हरा-भरा जङ्गल मिल जाय। यह सोच वह उड़ा, किन्तु वह जिस ओर जाता था उसी ओर अनन्त जलराशि दिखाई देती थी। अन्तमें वह थककर फिर उसी मस्तूलपर आ बैठा। उसे दृढ़ निश्चय हो गया कि इस मस्तूलके सिवा और दूसरा आश्रय नहीं है। अतएव वह निश्चिन्त होकर सुखपूर्वक समय बिताने लगा। ब्रह्मतत्त्व भी इसी प्रकारका है। अनन्त विश्वपतिके अनन्त भावका ज्ञान हुए बिना उसके प्रति आत्मसमर्पण नहीं किया जा सकता है।

२०—जैसे काँचके मकानमें रहनेवाला पुरुष भीतर बाहर दोनों ओर देख सकता है, उसी प्रकार ज्ञानी पुरुष संसारमें रहकर अन्तर बाह्य दोनों ओर दृष्टि रखता है।

२१—गीता पढ़नेसे जो बोध होता है, द्वादशबार 'गीता' शब्दका उच्चारण करने से भी वही समझा जाता है। जैसे गीतागी तागी तागी। हे जीव! सब मन्त्रोंका मूलमन्त्र त्याग ही है। अतएव सर्वस्व त्याग कर केवल एक परमात्माका आश्रय ग्रहण कर।

साधनाके अधिकारी।

१—जैसे आम, सेव, नारङ्गी आदि मधुर फल भगवान्‌को सेवामें अर्पण किये जाते हैं और अन्य लोगोंके काममें भी आते हैं,किन्तु जब कौआ उन फलोंको जुठार जाता है तब वे न तो देवसेवाके योग्य रहते हैं और न मनुष्योंके कामके। पवित्र-हृदय बालकों की भी ऐसी ही दशा है। यदि बचपनसे धर्म-पर आरूढ किये जावें तो इस लोक और परलोक दोनोंकी साधना भली भाँति कर सकते हैं। परन्तु एक बार उनके मनमें विषय-बुद्धिका प्रवेश होते ही वे किसी कामके नहीं रहते। स्वार्थ और परमार्थ दोनों से हाथ धो बैठते हैं।

२—जानते हो, मैं बच्चों पर इतना प्रेम क्यों करता हूँ? बचपनमें उनका मन सोलह आने उन्हींके पास रहता है। बड़े होने पर उनका मन कई कामों में बँट जाता है। विवाह होने पर आठ आना मन स्त्रीमें, बच्चे होने पर चार आना बच्चोंमें और शेष चार आना अन्य विषयोंमें बँट जाता है। बच-पनमें ईश्वरकी प्राप्तिकी चेष्टा करना बहुत सुगम है। बुढापेमें ईश्वर-प्राप्ति करना बहुत कठिन है, क्योंकि उस समय मन बिखरा रहता है।

३—जिस तोतेके गलेमें कण्ठी निकल आती है, वह फिर

किसी प्रकार पढ़ना नहीं सीख सकता। किन्तु बचपनमें स्वल्प परिश्रमसे ही वह पढ़ना सीख जाता है। इसी प्रकार वृद्धावस्था में ईश्वरके प्रति मन स्थिर करना बहुत कठिन है, किन्तु बचपनमें यह काम सहज ही हो जाता है।

४—एक सेर दूधमें एक छटाक पानी मिला हो तो स्वल्प आँचसे ही उसका मावा बन जाता है, किन्तु एक सेर दूधमें तीन पाव पानी मिला हो तो अधिक आँच देने और अधिक लकड़ियाँ जलाने पर मावा तैयार होगा। बाल्यावस्थामें विषयवासना बहुत कम रहती है, अतः उस समय स्वल्प परिश्रमसे ही ईश्वरकी ओर मन लग जाता है, किन्तु वृद्धावस्थामें वासनाओंकी विपुलता होनेके कारण उक्त कार्य बहुत श्रम-साध्य हो जाता है।

५—जैसे कच्चे बाँस की छड़ी नवानेसे नव जाती है, किन्तु सूखा बाँस नवानेसे टूट जाता है; इसी प्रकार बच्चोंका मन सहज ही ईश्वरकी ओर झुकाया जा सकता है, किन्तु बूढ़ोंका मन ईश्वरकी ओर आकर्षित करनेसे उससे दूर भागता है।

६—मनुष्योंका मन मोतियोंकी लड़के समान है। वह एक बार टूटी कि उसका सँभालना कठिन हो जाता है। इसी प्रकार मनुष्यका मन एकबार संसारमें लग जानेपर फिर उसका स्थिर करना कठिन हो जाता है।

७—सूर्योदयके प्रथम दही मथनेसे जैसा उत्तम मक्खन उठता है, धूप तेज़ हो जाने पर वैसा अच्छा मक्खन नहीं

उठता, इसी प्रकार बाल्यकालसे ईश्वरानुरागी होकर जो साधन-भजन करते हैं वे जैसी सिद्धि पाते हैं वैसी सिद्धि अन्य नहीं पाते।

८—वासनाहीन मन सूखी दियासलाईके समान है। उसे एक बार घिसी कि वह झट जल उठती है। किन्तु सीली दियासलाई हजार बार घिसने पर भी नहीं जलती। इसी प्रकार सरल सत्यनिष्ठ और निर्मलचित्त व्यक्तिको एक बार उपदेश देते ही ईश्वरानुराग उत्पन्न हो जाता है, विषयासक्त पुरुषको हजारों बार उपदेश देनेसे भी कुछ नहीं होता।
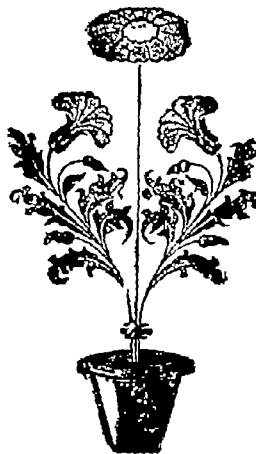
साधकों की भिन्नता।

१—साधक दो प्रकार के है। एक वे जिनका स्वभाव बन्दरके बच्चेके समान होता है। बन्दरका बच्चा जब अपनी माँ को कहीं जाते देखता है तो झट दौड़कर उसके पेटसे चिपक जाता है। वह जानता है, कि जो मैं अपनी माँ को न पकड़ूँगा तो वह मुझे न ले जायगी। दूसरे वे जिनका स्वभाव बिल्लीके बच्चेके समान होता है। बिल्लीके बच्चे अपनी माँ परही भरोसा रखते हैं। वे जानते हैं कि उसकी जहाँ इच्छा होगी वह वहाँ रक्खेगी। अतएव वे म्याऊँ-म्याऊँ करते एकही जगह बैठे रहते हैं और जब बिल्ली उनको स्थानान्तरित करना चाहती है तब उन्हें अपने मुँहमें दबाकर ले जाती है। ज्ञानी और कर्मशील साधक बन्दरके बच्चोंके समान स्वावलम्बी है। वे अपने पुरुषार्थ द्वारा ईश्वर-लाभ करनेकी चेष्टा किया करते हैं। और भक्तजन हरिचरणोंमें आत्मसमर्पण करके बिल्लीके बच्चोंकी तरह निश्चिन्त होकर बैठे रहते हैं।

२—एक मनुष्य किसीका पिता, किसीका भाई, किसीका पुत्र, किसीका मामा, किसीका दामाद और किसीका श्वसुर

होता है, देखो, यहाँ एक मनुष्य होनेपर भी सम्बन्धभेदसे उसके अनेक भेद हो जाते हैं। इसी प्रकार एक सच्चिदानन्दको, भक्तगण शान्त, दास्य, वात्सल्य, मधुर प्रभृति नाना भावोंसे उपासना किया करते हैं।

३—जिसका जैसा भाव उसे वैसाही लाभ होता है। अर्थात् जो उन्हें चाहता है वह उन्हें पाता है और जो उन्हें न चाहकर उनके ऐश्वर्य्य को कामना करता है, वह उसे ही पाता है।

४—भक्त किंवा ज्ञानियोंकी महिमा संसारमें प्रकट हो जानेपर उनका रहना कठिन हो जाता है—लोगोंके झुण्डके झुण्ड आकर उनको घेरते हैं। जैसे हाथीके दो प्रकार के दाँत होते हैं—खानेके और दिखानेके और, इसी प्रकार अनेक समय साधक लोग अपने मनके भावको छिपाकर अन्य ही प्रकारका भाव प्रदर्शित किया करते हैं।

साधनामें विघ्न।

१—जैसे घड़े के भीतर एक छोटासा छिद्र होनेसे धीरे-धीरे उसका सब पानी बाहर निकल जाता है, उसी प्रकार साधकके मनमें तनिक भी संसारासक्ति रहनेसे उसकी सारी साधना निष्फल हो जाती है।

२—गीली मिट्टी से बर्तन बनाये जाते हैं, किन्तु सूख जाने पर उसके बर्तन नहीं बन सकते। इसी प्रकार जिनके हृदय विषयासक्तिसे जड़ हो जाते हैं, उनसे कभी पारमार्थिक कार्य्य नहीं हो सकते।

३—शक्करमें बालू मिली रहनेपर भी चिंउटियाँ शक्कर ही को चुन-चुन कर खाती है, इसी प्रकार साधु पुरुष इस संसारमें कामिनी-काञ्चनरूपी बालूको परित्याग करके उसकी सार वस्तु अर्थात् सच्चिदानन्दको ही ग्रहण करते हैं।

४—जिस कागज़में तेलका स्पर्श हो जाता है वह लिखनेके कामका नहीं रहता। इसी प्रकार जिन लोगोंके मनमें कामिनी-कंचन-रूपी तेल लग जाता है उनसे साधना नहीं हो सकती। तेल लगे हुए कागज़ पर खड़िया मिट्टी घिसो, तो वह तेलके अंशको खींच लेती है और वह कागज़ फिर

खिंचनेके योग्य हो जाता है, इसी प्रकार साधकोंके मनमें लगा हुआ कामिनी-कंचनरूपी तेल त्यागरूपी खड़िया मिट्टीसे खिंच जाता है और वे साधना करनेके योग्य बन जाते हैं।

५—जैसे गौशालामें जब कोई अन्य पशु आता है तब सब गायें उसे मार कर भगा देती हैं, किन्तु जब कोई गाय आती है तब वे उसे स्नेह से चाटने लगती हैं। इसी प्रकार जब भक्तों के पास भक्तजन आते हैं तब वे बड़े आनन्द के साथ उनसे मिलते और धर्म-चर्चा करते हैं, किन्तु भक्तोंके सिवा जब और कोई व्यक्ति उनके पास आता है तब वे उससे अधिक मेल-मिलाप नहीं करते हैं।

६—थोड़े जलवाले सरोवरमें जब हम जल पीनेके लिए जाते हैं तो उसमें धीरे-धीरे घुसते और सावधानीके साथ जल पीते हैं। जो ऐसा न करें तो नीचे जमा हुआ कचरा उठ बैठे और सारा जल गदला हो जाय। इसी प्रकार जो साधक ईश्वरलाभ करनेके अभिलाषी हों, उन्हें गुरुवचनों पर विश्वास रखकर धीरे-धीरे साधनामें प्रवृत्त होना चाहिए। शास्त्र-विचार और तर्क-वितर्क करनेसे क्षुद्र मन सहज ही भ्रमित हो जाता है।

७—जिस जलके द्वारा भूत उतारना है, यदि उसीमें उसका निवास हो तो फिर भूत कैसे भगाया जा सकता है? जिस मनके द्वारा साधना भजन करना है यदि वही विषयासक्त हो तो साधन भजन कैसे हो सकता है?

८—मन और वाणीको एक करना ही सच्ची साधना है। जो लोग मुँहसे तो कहा करते हैं कि हे भगवान्! तुम्हीं हमारे सर्वस्व हो, किन्तु कामिनी-कञ्चनको ही सर्वस्व समझते हैं—उनकी साधना निष्फल है।

९—जब तक मनमें वासनाओंका कुछ भी लगाव रहता है, तब तक ईश्वर-लाभ होना असम्भव है। जैसे जब तक धागेमें ज़रा भी फाँस रहती है, तब तक वह सुईके भीतर नहीं जाता। जब मन वासनारहित होकर शुद्ध हो जाता है, तभी ईश्वर-लाभ होता है।

१०—जो ईश्वर-लाभके लिये साधन-भजन करना चाहते हों, उन्हें किसी प्रकार कामिनी-कञ्चनकी आसक्ति नहीं रखनी चाहिए। कामिनी-कंचनका संश्रय रहते, सिद्धि प्राप्त करनेकी कोई आशा नहीं है।

१०—जो ईश्वर-लाभके लिये साधन-भजन करना चाहते हों, उन्हें किसी प्रकार कामिनी-कंचनकी आसक्ति नहीं रखनी चाहिए। कामिनी-कंचनका संश्रव रहते सिद्धि प्राप्त करनेकी कोई आशा नहीं है।

११—धन, पुत्र, यश आदिकी कामना के लिये ईश्वर-प्रार्थना करना उचित नहीं है। जो केवल ईश्वर-लाभकी इच्छासे उपासना करते हैं, वे अवश्य दर्शनलाभ करते हैं।

१२—वायुके हिलोरोंसे जब जल चञ्चल रहता है तब उसमें ठीक प्रतिबिम्ब नहीं दिखाई देता। उसी प्रकार जब तक

मानको कितनाही मिटाओ, पर उसका कुछ न कुछ अंश बनाही रहता है।

१८—घोर निद्रामें सोता हुआ मनुष्य जब स्वप्नमें देखता है, कि मुझे कोई हाथमें तलवार लिये हुए मारनेके लिये आरहा है, तब वह तुरन्त जाग उठता है, किन्तु जागने पर उक्त घटनाको असत्यता जानकर भी—कुछ समय तक उसका हृदय धड़कता रहता है। इसी प्रकार अभिमान है, वह जाकर भी नहीं जाना चाहता।

१९—जो कामिनी-काञ्चनसे ज़रा भी सम्पर्क नहीं रखते, वही सच्चे त्यागी हैं। यदि स्वप्नमें भी स्त्री-सहवासके भ्रमसे वीर्य्य स्खलित हो जाय या द्रव्यादि पर आसक्ति उत्पन्न हो तो उनकी सारी साधना नष्ट हो जाती है।

२०—भगवान् कल्पतरु हैं। कल्पतरु के नीचे जो याचना की जाती है वह सद्यः सफल होती है। इसलिये साधन-भजनके द्वारा जब मन शुद्ध हो जाय, तब खूब सावधानीके साथ कामना करनी चाहिये, अन्यथा परिणाम भयङ्कर होता है।

एक व्यक्ति किसी समय भ्रमण करते-करते एक बड़े मैदानमें जा पहुँचा। धूपकी तेज़ी और मार्ग के परिश्रमसे वह अत्यन्त क्लान्त होकर एक वृक्षकी छायामें जा बैठा। बैठे-बैठे सहसा उसके मनमें विचार उठा कि, यहां एक उत्तम पलँग होता तो सुखकी नींद सोता। पथिक यह नहीं जानता था कि, मैं कल्पवृक्षके नीचे बैठा हूँ। मनमें उक्त कल्पना करते

ही एक उत्तम पलँग आ गया। पथिक आश्चर्य-चकित होकर उस पलँग पर लेट गया। अब वह सोचने लगा कि, एक युवती आकर मेरी चरण-सेवा करती तो मैं आनन्दके साथ शयन करता। इच्छा करतेही शीघ्र एक षोडशी युवती आकर उसके पैर दबाने लगी। पथिकके आश्चर्य और आनन्दकी सीमा न रही। अब उसे कुछ भूखकी खबर हुई। वह सोचने लगा कि जब इच्छा करने पर इतनी वस्तुयें प्राप्त हुई हैं तो क्या कुछ भोजनके लिये न मिलेगा? शीघ्रही एक नाना प्रकारके व्यञ्जनों से भरी हुई थाली आगई। पथिक भोजन करके फिर पलँग पर लेट गया और मन-ही-मन वर्तमान घटना की आलोचना करने लगा। सहसा उसके मनमें विचार उठा कि, इस वनमें से एकाध शेर आ जाय तो मेरी क्या गति हो? मनमें यह विचार आतेही सामनेसे एक शेर छलाँगें मारता हुआ आ पहुँचा और उसकी गर्दनको पकड़ कर रक्त पीने लगा। पथिक की जीवनलीला वहीं समाप्त हो गई। इस संसारमें जीवोंकी भी ऐसी ही दशा होती है। वे ईश्वरकी आराधना करके उससे धन, जन, मान, यश आदिकी कामना करते हैं। प्रारम्भमें उनको अपनी इच्छानुरूप कुछ फल अवश्य मिलता है, किन्तु अन्तमें शेरका भय रहता है। रोग, शोक, दुःख, मान, अपमान और विषयरूपी व्याघ्र साधारण व्याघ्रसे हजार गुना यन्त्रणादायक है।

२१—एक व्यक्तिके मनमें सहसा वैराग्यभाव उत्पन्न हुआ।

वह अपने भाईसे कहने लगा—"मुझे यह संसार अच्छा नहीं लगता। मै किसी निर्जन स्थानमें जाकर भगवान्‌का भजन करूँगा।" इस शुभ संकल्पके लिये उसके भाईने अनुमति दे दी। वह अपना घर छोड़कर एक वनमें चला गया और घोर तपस्या करने लगा। लगातार १२ वर्ष तक कठिन तपस्या करनेके उपरान्त उसे कुछ सिद्धि प्राप्त होगई। वह घर लौट आया। बहुत दिनोंके बाद उसको घर आया हुआ जानकर उसके भाईको बड़ा आनन्द हुआ। बातोंही बातोंमें उसने अपने तपस्वी भाई से पूछा—"भाई। इतने दिन घोर तपस्या करके क्या ज्ञान प्राप्त किया?" यह सुन तपस्वी हँसा और सामने जाते हुए एक हाथीके पास जाकर और उसके शरीरपर तीन बार हाथ फेरकर कहने लगा—"हाथी तू मर जा।" इतना कहते ही हाथी मृतवत् होकर ज़मीनपर गिर पड़ा। कुछ समयके उपरान्त उसने फिर हाथीके शरीर पर हाथ फेर कर कहा,—"हाथी, तू इसी समय उठ बैठ।" हाथी शीघ्र उठकर खड़ा हो गया।

इसके पश्चात् नदी पर जाकर मन्त्र-बलसे वह नदीके इस पार से उस पार तक चला गया। दर्शकगण दाँतों तले अँगुली दबा कर रह गये। किन्तु उसके भाई ने कहा—"भाई! तुमने इतने समय तक व्यर्थ श्रम उठाया। हाथी को मारने या जिलाने से तुम्हें क्या लाभ हुआ? इसके सिवा १२ वर्ष कठिन तपस्या करके तुमने नदीके इस पार से उस पार तक

जाना सीखा, पर मैं जब चाहता हूँ तभी एक पैसा खर्च करके नदीके उस पार चला जाता हूँ। अतएव यह तुम्हारा सारा प्रयास वृथा है।" भाईकी बातें सुनकर तपस्वीकी आँखें खुल गईं। वह कहने लगा,—"वास्तवमें, इससे मुझे कोई लाभ नहीं हुआ।" ऐसा कहकर वह ईश्वर-दर्शन करनेकी इच्छासे फिर तपस्या करनेको चला गया।

२२—अपनेको अधिक चतुर समझना उचित नहीं है। देखो, कौआ अपनेको सब पक्षियोंसे अधिक चतुर समझता है, किन्तु वही सबसे अधिक दूषित चीजें खाता है। इसी प्रकार इस संसारमें जो मनुष्य अधिक चालाकी किया करते हैं वे ही अधिक ठगे जाते हैं—ठोकरें खाते हैं।

२३—एक मनुष्य गङ्गाके किनारे खड़ा होकर, एक हाथमें रुपया और दूसरे में मिट्टीका ढेला लेकर विचार करने लगा कि रुपया ही मिट्टी, और मिट्टी ही रुपया है। इसके पश्चात् उसने वे दोनों चीज़ें गङ्गाजलमें फेंक दीं। कुछ समय के उपरान्त वह सोचने लगा कि,यदि लक्ष्मीजी नाराज़ होकर मुझे खानेको न देंगी तो? अतः वह फिर कहने लगा—लक्ष्मी, तुम हमारे हृदयमें निवास करो,किन्तु मैं तुम्हारे ऐश्वर्य्य को नहीं चाहता।

२४—कई लोग व्यर्थ ही अपने बड़प्पनमें भूले रहते हैं। मच्छर बैलके सींग पर बैठा था। कुछ समयके उपरान्त उसके मनमें उत्तम बुद्धि जाग्रत हुई। वह सोचने लगा,मैं कबसे इसके

सींग पर बैठा हूँ, मेरे कारण इसे कितना कष्ट पहुँचा होगा ? अतः उसने बैलको पुकार कर कहा,—"भाई मुझे क्षमा करना। मैं बहुत समयसे तुम्हारे सींग पर बैठा हूँ, तुम्हें बहुत कष्ट पहुँचा होगा। अब मैं शीघ्र उड़ जाता हूँ और फिर कभी तुम्हें इस प्रकार तकलीफ़ न दूँगा।" बैलने उत्तर दिया— नहीं, नहीं, तुम सपरिवार आकर हमारे सींग पर निवास करो न—तुम्हारे रहने-जानेसे हमारा कुछ बनता-बिगड़ता नहीं है।

२५—एक दिन लक्ष्मीनारायण नामका एक धनी मारवाड़ी दक्षिणेश्वरके मन्दिरमें परमहंसजीके दर्शन करनेके लिये गया। उसके साथ अनेक समय वेदान्त-विषय पर बातचीत होती रही। अन्तमें जब वह घर जाने लगा तब उसने परमहंसजीसे कहा— "मैं आपकी सेवाके निमित्त दस हज़ार देना चाहता हूँ।" यह सुन परमहंसजी को दारुण आघात पहुँचा—वे कुछ समयके लिये अचेतनसे हो गये। फिर उन्होंने विरक्त होकर कहा—"तुम हमको मायाका प्रलोभन दिखाते हो ?" मारवाड़ी ने कुछ अप्रतिभ होकर कहा—"अभी आप कुछ कच्चे हैं। जो महापुरुष अत्यन्त उच्चावस्था को पहुँच जाते हैं उनको त्याज्य और ग्राह्य दोनों एक समान हो जाते हैं। कोई उनको कुछ दे या लेकर उन्हे सन्तोष या क्षोभ नहीं पहुँचा सकता है।" मारवाड़ी भक्तकी बातें सुनकर परमहंसजी हँस पड़े और कहने लगे—"देखो, निर्मल मन आइनेके समान

स्वच्छ होता है, उसमें कामिनी-काञ्चनरूपी कालिमा लगाना उचित नहीं है।" मारवाड़ी बोला—"अच्छा, तो यह व्यक्ति-जो नित्य आपकी सेवा किया करता है, इसके पास रुपया जमा करदूँ ?" परमहंसजीने कहा—"नहीं, ऐसा भी नहीं हो सकता। कारण, कि जिसके पास रुपये जमा किये जावेंगे उससे यदि मैं कहूँ कि अमुक व्यक्तिको इतने रुपये दे दो, या अमुक वस्तु खरीद लो, और वह रुपया देना न चाहे तो हमारे मनमें सहजही ऐसा अभिमान उत्पन्न हो सकता है कि, रुपया तो इसका नहीं,—हमारा है, अतएव यह भी ठीक नहीं है।" मारवाड़ी भक्त परमहंसजीकी बातें सुनकर बहुत विस्मित हुआ और उनके ऐसे अदृष्टपूर्व त्यागभावको देखकर परम प्रसन्न होता हुआ अपने घरको चला गया।

साधनमें सहाय।

१—प्रथमावस्थामें किसी निर्जन स्थानमें बैठकर मन स्थिर करना चाहिये, अन्यथा सांसारिक अनेक बातें देख-सुनकर मन चञ्चल हो जाता है। जैसे दूध और पानीको एकत्र रखने से दोनों मिल जाते हैं, किन्तु दूधको मथकर जब उसका मक्खन बना लिया जाता है तब वह पानीसे नहीं मिलता, उसपर तैरने लगता है, इसी प्रकार जिसका मन स्थिर हो जाता है वह सब जगह बैठकर भजन कर सकता है।

२—निष्ठा-भक्तिके बिना ईश्वर-लाभ नहीं होता। जैसे एक पतिमें निष्ठा रखनेसे स्त्री-सती हो जाती है, उसी प्रकार अपने इष्टके प्रति निष्ठा रखने से इष्ट-प्राप्ति होती है।

३—प्रथमावस्थामें किसी निर्जन स्थानमें बैठकर ध्यान करनेका अभ्यास करना चाहिये। जब अभ्यास दृढ़ हो जाय तब जहाँ चाहे बैठकर ध्यान किया जा सकता है। जैसे जब तक वृक्ष छोटा रहता है तब तक उसकी रक्षाका उपाय करना पड़ता है, यदि उसकी रक्षा न करें तो गाय बकरी आदि खाकर उसे नष्ट करदें। वही पेड़ जब बड़ा हो जाता है तब उससे १० गाय-बकरी बाँध दो, तोभी वे उसको कुछ हानि नहीं पहुँचा सकतीं।

४—ध्यान मनमें, वनमें और कोनेमें, सब जगह किया जा सकता है।

५—सह्य गुणके समान और दूसरा गुण नहीं है। जो सहन करता है वह रहता है और जो सहन ही नहीं करता वह नष्ट हो जाता है। सब वर्णमालाओंमें तीन 'स' होते हैं—श, ष, स।

६—सह्य गुणके समान और दूसरा गुण नहीं। जैसे लुहारको निहाई पर नित्य हजारों चोटें पडती है, किन्तु इससे वह ज़रा भी विचलित नहीं होती। इसी प्रकार सबमें सह्य गुण होना चाहिये। कोई कुछ भी करे, कुछ भी कहे, सब सहन करना चाहिये।

७—मछली कितनी ही दूर क्यों न हो, चाँवल फकते ही वहाँ तुरन्त आ जाती है। इसी प्रकार भगवान् भी विश्वासी भक्तोंके हृदयमें शीघ्र प्रकट होते हैं।

८—एक जातिके कीड़े होते हैं, जिन्हें लोग पतङ्ग कहते हैं। वे प्रकाशको देखकर दौडे आते हैं। उनके प्राण भलेही चले जायँ, किन्तु वे प्रकाश को छोडकर अँधेरेमें नहीं जाते। इसी प्रकार भगवद्भक्त साधु-सङ्ग और हरिकथा के लिये लालायित रहते हैं। वे साधन-भजनको छोडकर संसारके असार पदार्थों के मोहमें नहीं फँसते।

९—गुरुवाक्यमें अचल और अटल विश्वास उत्पन्न हुए बिना ईश्वरलाभ होना असम्भवित है।

१०—इस दुर्लभ मनुष्य-देहको पाकर जो ईश्वर-लाभ नहीं कर सका, उसका जन्म धारण करना ही वृथा है।

११—मन कमानीदार गद्दीके समान है। जब तक गद्दी पर बैठो तभीतक वह दबी रहती है, किन्तु ज्योंही उस परसे उठो त्योंही वह फिर पूर्ववत् उठ जाती है। मन भी उसी प्रकारका है। वह सदा स्फीत होकर रहना चाहता है। उसे जब तक हरिचर्चा और साधुसङ्गमें लगाओ, तभी तक वह संयत अवस्थामें रहता है, इसके पश्चात् वह फिर अपनी पूर्वावस्थामें आ जाता है।

१२—नाममें रुचि और विश्वास उत्पन्न हो जाने पर फिर और किसी प्रकारके साधन-भजनकी आवश्यकता नहीं रहती। नामके प्रभावसे उसके सब सन्देह दूर हो जाते हैं। नामसे चित्त शुद्ध होता और नामही से भगवद्दर्शन होते हैं।

१३—साधुसङ्ग चांवलके धोवनके समान है। जिसे अधिक नशा चढ़ा हो उसे चांवलका धोवन पिलानेसे नशा उतर जाता है, इसी प्रकार संसारमदसे मत्त हुए लोगोंका नशा उतारनेको एकमात्र साधुसङ्ग ही है।

१४—जैसे वकीलको देखकर मुकद्दमा-मामले और कचहरी की याद आती है, वैद्य और डाक्टर को देखकर रोग और औषधिका स्मरण हो आता है, उसी प्रकार भगवद्भक्त और साधु पुरुष को देखकर ईश्वर-भावकी जागृति होती है।

साधनमें अध्यवसाय।

१—रत्नाकरमें अनेक रत्न हैं, यदि तुम एकही डुबकीमें रत्न नहीं पा सके, तो निराश होकर उसे रत्न-हीन मत समझो। इसी प्रकार कुछ साधन-भजन करने पर यदि तुम्हें ईश्वर-दर्शन नहीं हुए, तो तुम हताश होकर उसे अप्राप्य मत समझो। धैर्य रखकर साधना करते जाओ, यथासमय तुम्हारे ऊपर भगवत्कृपा अवश्य होगी।

२—समुद्रमें एक प्रकारका जीवधारी रहता है। वह सर्वदा मुँह बाये समुद्रपृष्ठ पर तैरता रहता है। किन्तु जब स्वाति नक्षत्रका एक बिन्दु जल उसके मुँहमें पड़ जाता है, तब वह मुँह बन्द करके तुरन्त पानीके नीचे चला जाता है, फिर कभी ऊपर नहीं आता। तत्त्वपिपासु विश्वासी साधक भी इसी प्रकार गुरुमन्त्र रूपी एक विन्दु जल पाकर, साधनाके अगाध जलमें डूब जाते हैं—अन्य ओर दृष्टिपात भी नहीं करते।

३—जब किसी बड़े आदमीसे मिलना होता है तब अनेक सिपाहियों की खुशामद करनी पड़ती है। इसी प्रकार ईश्वर-दर्शन करनेके लिये अनेक साधन-भजन और नाना उपायोंका आश्रय ग्रहण करना पड़ता है।

४—एक लकड़हारा जङ्गलसे लकड़ी लाकर बाज़ारमें बेचा करता था। एक दिन वह जङ्गलसे अच्छा-अच्छी लकड़ियाँ लिये आरहा था। रास्तेमें एक मनुष्य मिला। उसने कहा—"भाई। जितने आगे जाया करोगे, उतनाही अच्छा माल मिला करेगा। दूसरे दिन वह लकड़हारा कुछ और आगे चला गया। उस दिन उसे प्रतिदिनकी अपेक्षा अच्छी लकड़ियाँ मिलीं। बाज़ारमें उनके दाम भी अधिक मिले। दूसरे दिन वह अपने मन-ही-मन सोचता जाता था कि, उस मनुष्यने आगे जानेके लिये कहा था, अच्छा, आज मैं और आगे जाऊँगा। कुछ दूर आगे जाने पर उसे चन्दनका वन मिला। वह चन्दन को ले आया और आज उसे और भी अधिक दाम मिले। वह नित्य अधिकाधिक आगे जाने लगा। क्रमशः उसे ताँबे, चाँदी, सोने और हीरे की खानि मिलीं और वह महाधनी हो गया। धर्मपथका भी यही हाल है। केवल आगे जाओ, एकाध ताम्बे या चाँदीकी खानिको देखकर या थोड़ी बहुत सिद्धि पाकर ही यह मत समझ बैठो कि मैं सब पा चुका। बस, नित्य आगे बढ़ते जाओ।

५—एक मनुष्यने परमहंसजीसे पूछा—"प्रभो। मैं अनेक दिनसे साधन-भजन कर रहा हूँ, पर मुझे अभी तक कुछ भी सिद्धि नहीं मिली। क्या मेरी सारी साधना वृथा गई?" परमहंसजीने कुछ हँसकर कहा—"देखो, जो

खानदानी किसान हैं वे १२ वर्ष तक पानी न बरसने पर भी खेती करना नहीं छोड़ते, किन्तु जो पक्के किसान नहीं हैं, जिन्होंने यह सुनकर कि खेती करनेमें बड़ा लाभ होता है, खेती करना प्रारम्भ किया है, वह एकही वर्ष पानी न बरसनेसे दूसरे वर्ष खेती करना बन्द कर देते हैं। इसी प्रकार जो सच्चे भक्त हैं वे समस्त जीवन साधन-भजन करके ईश्वर-दर्शन न पाकर भी निराश नहीं होते और निरन्तर साधनामें लगे रहते हैं।

६—एक मनुष्यने एक कुआ खोदना आरंभ किया। किन्तु जब १५-२० हाथ गहरा खुद जाने पर भी उसमें पानीके चिह्न दिखाई न दिये, तब उसने निराश होकर उस कार्यको बन्द कर दिया। उसने एक दूसरा स्थान चुना और उस जगह कुआ खोदना आरम्भ किया। इस बार उसने पहले की अपेक्षा अधिक गहरा खोदा, परन्तु पानी फिर भी न निकला। निराश होकर उसने इस कार्य को भी बन्द कर दिया। अब तीसरा स्थान पसन्द किया, परन्तु पहले के समान यहाँ भी पानी नहीं निकला। वह अन्तमें निराश होकर बैठ रहा। तीनों कुओंमें उसे प्राय १०० हाथ खुदाई करना पड़ी। यदि वह धैर्य रखकर पहले कुएका काम जारी रखता तो बहुत सम्भव था कि, ४०—५० हाथ गहरे पर ही पानी निकल आता। इसी प्रकार जो मनुष्य किसी एक बात पर स्थिर नहीं रहते हैं, उनकी भी ऐसी ही दशा होती है। एक बार

साधना आरम्भ करने पर जब तक अभीष्ट-सिद्धि न हो जाय, तब तक उसमें लगे रहना चाहिए। यही सिद्धि प्राप्त करने का मूल मन्त्र है।

व्याकुलता।

१—जैसे सतीका मन पतिमें, लोभीका धनमें और विषयीका विषयमें लगा रहता है, उसी प्रकार भक्तोंको परमेश्वरमें मन लगाना चाहिए। जिस दिन भगवान्‌के प्रति ऐसी प्रीति लग जायगी, उसी दिन उसके दर्शन हो जायँगे।

२—माताके पाँच बच्चे हैं। वह किसीको खिलौना, किसीको बाजा और किसी को भोजन देकर समझाये रखती है। परंतु जब उनमें से कोई बच्चा खिलौने को फेंक कर माँ-माँ कह कर रोता है तब उसे माँ शीघ्र दौड़कर उठा लेती है और गोदमें बिठाकर शान्त करती है। हे जीव! तुम काम-काञ्चनको लेकर भूले हुए हो! यह सब फेंककर ईश्वरके लिए व्याकुल होओ, वह शीघ्र आकर तुम्हें गोदमें ले लेगा।

३—सम्मान न होने, धन-सम्पत्ति न मिलनेके कारण अनेक लोग रोते हैं और व्याकुल होते हैं, किन्तु ईश्वर-लाभ न होने, भगवान्‌के चरणकमलोंमें प्रीति न होनेके लिए कितने मनुष्य अपनी आँखोंसे आँसू गिराते हैं?

४—पानी में डूबने पर जैसे प्राण विकल होते हैं, इसी प्रकार जिस दिन परमेश्वरके लिए प्राण व्याकुल होंगे, उसी दिन उसके दर्शन हो जायँगे।

५—बच्चे पैसोंके लिए कभी माँसे फरियाद करते, कभी रोते हैं और कभी मचल जाते हैं। इसी प्रकार तुम आनन्द-स्वरूप परमात्माकी प्राप्तिके लिए बच्चोंके समान सरलपनसे व्याकुल होओ, फिर उसके दर्शन मिलनेमें विलम्ब न होगा।

६—जो प्यासा है, वह गंगा के पानी को मैला कहकर क्या अन्य किसी सरोवरमें जल पीनेके लिए जावेगा? इसी प्रकार जिसे धर्म-तृषा लगती है वह यह धर्म ठीक नहीं है, वह धर्म ठीक नहीं है आदि कहकर क्या यहाँ वहाँ भटकता फिरेगा? नहीं। सच्ची तृषाके आगे विचार नहीं चलता।

भक्ति और भाव।

१—सादे काँच पर किसी वस्तुका प्रतिबिम्ब नहीं पड़ता, परन्तु उस पर मसाला लगा देनेसे प्रतिबिम्ब पड़ने लगता है—जैसे फोटोग्राफी में। उसी प्रकार शुद्ध मन पर भक्तिरूपी मसाला लगानेसे भगवान्‌का प्रतिरूप दिखाई देता है। केवल शुद्ध मनमें बिना भक्तिके रूप नहीं देखा जा सकता।

२—पहले भाव, फिर प्रेम और अन्तमें भाव-समाधि। जैसे भक्त लोग सङ्कीर्तन करते-करते पहले 'राधाकृष्णकी जय' 'राधाकृष्णकी जय' कहते हैं। फिर क्रमशः भावमग्न होनेसे केवल 'जय' 'जय' शब्दकाही उच्चारण करते हैं। अन्तमें केवल 'ज' कहते-कहते भाव-समाधि में मग्न हो जाते हैं। जो भक्त इस प्रकार कीर्त्तन करते हैं, वे वाह्यज्ञानशून्य होकर स्थिर हो जाते हैं।

३—जिसे भगवान्‌की भक्ति प्राप्त हो जाती है, वह समझने लगता है कि मैं यन्त्र और तुम यन्त्री हो, मैं गृह और तुम गृही हो, मैं रथ और तुम रथी हो, आप जैसा कहावेंगे वैसा कहूँगा, जैसा चलावेंगे वैसा चलूँगा, जो करावेंगे वह करूँगा।

४—भगवान् के चरणकमलोंमें भक्ति उत्पन्न होने से विषय-कर्म आप-ही-आप छूट जाते हैं। जैसे शक्कर की वस्तु खाने पर गुड़ की वस्तु फीकी लगती है, उसी प्रकार भक्ति के आगे सब विषय-कर्म फीके पड़ जाते हैं। फिर उनकी चाह नहीं रहती।

ध्यान ।

१—साधु लोग रात्रिको बिस्तरों में छिपकर मसहरा में बैठकर ध्यान करते हैं। लोग समझते हैं कि वे सो रहे है। उनमें बाहरी दिखाऊ भाव बिल्कुल नहीं होता।

२—साधकोंको ध्यान करते समय कभी-कभी निद्राके समान एक अवस्था प्राप्त होती है, उसे योग-निद्रा कहते हैं। इसी अवस्था में अनेक साधकोंको भगवान् के स्वरूप का दर्शन होता है।

३—ध्यानमें बिल्कुल तन्मय हो जाना चाहिए। जब पूरा-पूरा ध्यान लग जाता है, तब शरीर पर पक्षी बैठ जाय तो भी कुछ खबर नहीं होती। जब मै काली के मन्दिर में बैठ कर ध्यान किया करता था, उस समय अनेक लोग कहा करते थे कि आपके शरीर पर अनेक पक्षी बैठ कर खेला करते थे।

साधना और आहार ।

—⊱⊱:०:⊰⊰—

१—जो हविष्यान्न खाता है, किन्तु ईश्वरलाभ करनेकी चेष्टा नहीं करता, उसका हविष्यान्न खाना मांस-भक्षणके समान है और जो मांस खाता है, किन्तु ईश्वर-प्राप्तिके लिए चेष्टा करता है उसका मांस खाना हविष्यान्न खानेके सदृश है ।

भगवत्कृपा।

१—जिस प्रकार हजारों वर्षके अँधेरे घरमें एक दियासलाई की सींक घिसते ही उजेला हो जाता है, उसी प्रकार जीवोंके जन्म-जन्मान्तरके पाप भी भगवान् की एक ही कृपादृष्टिसे दूर हो जाते हैं।

२—चन्दनकी सुगन्धिसे जङ्गलके समस्त वृक्ष, जिनमें सार होता है, चन्दन हो जाते हैं, किन्तु जिनमें सार नहीं होता—जैसे बाँस, केला आदि—वे चन्दन नहो होते। इसी प्रकार जिनका मन पवित्र होता है, वे भगवत्कृपा पाकर उसी घड़ी साधु हो जाते हैं, किन्तु विषयासक्त संसारी मनुष्य सहज ही नहीं सुधरते।

३—मैले-कुचैले रहना बालकोंका स्वभावसिद्ध गुण है, किन्तु माता-पिता उनको मैले नहीं रहने देते, इसी प्रकार जीव इस संसारमें लिप्त होकर कितना ही मलिन क्यों न हो जाय, परन्तु परम पिता उन सबके शुद्ध करने की योजना कर देता है।

सिद्ध अवस्था।

१—यदि लोहा एक बार पारस-पत्थर के स्पर्श से सोना बन जाय तो फिर उसे किसी जगह रक्खो, उस पर ज़ङ्ग न चढ़ेगी—वह सोनेका सोना बना रहेगा। इसी प्रकार जो ईश्वरलाभ कर चुके हैं, वे चाहे संसारमें रहें चाहें वनमें, किसी जगह भी उनको दोष स्पर्श नहीं करता।

२—जैसे लोहेकी तलवार पारस पत्थरके स्पर्शसे सोनेकी बन जाती है, किन्तु फिर उससे जीव-हिंसा नहीं होती, उसी प्रकार सिद्धावस्था प्राप्त होने पर मनुष्य से फिर कोई अन्याय-कार्य नहीं होता।

३—किसी व्यक्तिने परमहंसजीसे पूछा—"सिद्ध पुरुषोंका स्वभाव कैसा होता है?" परमहंसजीने उत्तर दिया—"जैसे आलू बैंगन आदि उबालनेसे नरम हो जाते हैं, उसी प्रकार सिद्ध पुरुषोंका स्वभाव भी नरम हो जाता है। उनमें अभिमान नामको भी नहीं रहता।

४—सिद्ध चार प्रकारके हैं। १—स्वप्न-सिद्ध, २—मन्त्र-सिद्ध, ३—कृपा वा हठात्‌सिद्ध, ४—नित्य-सिद्ध।

५—कोई-कोई स्वप्नमें जपमन्त्र पाकर उसके द्वारा सिद्ध

होते हैं, उन्हें स्वप्न-सिद्ध कहते हैं, जो सद्‌गुरुके निकट मन्त्र लेकर साधना द्वारा सिद्ध होते हैं उन्हें मन्त्रसिद्ध कहते हैं; कोई-कोई मनुष्य किसी महापुरुष की कृपासे सिद्ध हो जाते हैं उन्हें कृपासिद्ध कहते हैं, और जो बचपन से धर्ममें प्रीति रखकर सिद्धि पाते हैं वे नित्य-सिद्ध कहलाते हैं।

६—ध्यान-सिद्धि किसे कहते हैं? जो ध्यान करनेके लिये बैठते ही भगवान्‌के भावमें मग्न हो जाते हैं, वे ध्यान-सिद्ध कहलाते हैं।

७—जहाज़ किसी दिशाको क्यों न जाय, चुम्बककी सूई सदैव उत्तर दिशाकी ओर ही रहती है। इससे जहाज़ अपनी गन्तव्य दिशासे विचलित नहीं होता। इसी प्रकार यदि मनुष्यका मन सदैव ईश्वरकी ओर रहे, तो वह संसारमें कभी न भूले।

८—चकमक पथरी सैकड़ों वर्ष तक पानीमें डूबी रहे, तोभी उसकी अग्नि नष्ट नहीं होती। उस पर रूई रखकर लोहे की ठोकर मारते ही आग प्रकट हो जाती है। इसी प्रकार विश्वासी भक्त हज़ारों वर्षों तक कुसङ्गमें डूबे रहने पर भी धर्मसे च्युत नहीं होते हैं। भगवत्कृपा होते ही वे फिर ईश्वरप्रेममें उन्मत्त हो जाते हैं।

९—जैसी भावना करो, वैसी ही सिद्धि मिलती है। जैसे कीट, भृङ्गीकी भावना करते-करते भृङ्गी ही बन जाता है। उसी प्रकार जो सच्चिदानन्दकी भावना करता रहता है, वह आनन्दमय हो जाता है।

१०—मतवाला जैसे नशेकी झोंकमें कमरकी धोतीको कभी सिर पर बाँधता है और कभी बगलमें दबाकर नाचने लगता है, सिद्ध-पुरुषोंकी अवस्था भी प्रायः ऐसी ही होती है।

११—जैसे पुलके नीचे से जल जल्दी बह जाता है, वहाँ नहीं ठहरता; इसी प्रकार मुक्तपुरुषोंके हाथमें जो रुपये पैसे आते हैं वे शीघ्रही खर्च हो जाते हैं। उनमें विषय-बुद्धि नाममात्रको नहीं रहती।

१२—जैसे नारियल या खजूरका पत्ता टूट जाने पर भी उस स्थान पर दाग रह जाता है, उसी प्रकार अहङ्कार जाने पर भी उसका कुछ न कुछ चिह्न रह ही जाता है। किन्तु इतना अभिमान किसीका अनिष्ट नहीं कर सकता। उसके द्वारा खाने, पीने सोने आदिके सिवा और कोई काम नहीं होता।

१३—जैसे आम पक जाने पर आप-ही-आप धरती पर गिर पड़ता है, उसी प्रकार ज्ञान प्राप्त होने पर आत्माभिमान आपही-आप दूर हो जाता है।

१४—तीन गुण हैं—सत्, रज और तम। इन तीनों गुणोंको कोई निःशेष नहीं कर सकता। एक मनुष्य किसी जङ्गली राहमें जारहा था। इतनेमें तीन डाकुओंने आकर उसे पकड़ लिया और उसके पास जो कुछ था, सब छीन लिया। तत्पश्चात् उनमेंसे एक डाकू बोला—"इस मनुष्यको अब यहीं मार डालना चाहिये।" दूसरे ने कहा,—"नहीं, मारना उचित नहीं है। इसके हाथ पैर बाँधकर छोड़ देना चाहिये।" डाकू

उसके हाथ पाँव बाँधकर चले गये। कुछ समयके पश्चात् उनमें से एक आदमी आकर कहने लगा,—"आहा! तुम्हें बड़ा कष्ट हुआ, मैं तुम्हारे बन्धन खोले देता हूँ। यह कह उसने बन्धन खोल दिये। वह फिर कहने लगा—"तुम हमारे साथ चलो, मैं तुम्हें रास्ता बतला दूँ।" दोनों चलने लगे। कुछ समयके पश्चात् डाकूने एक रास्तेकी ओर इशारा करके कहा—"इस रास्ते परसे चले जाओ, तुम अपने घर पहुँच जाओगे।" वह मनुष्य बोला—"तुमने हमारे प्राणोंकी रक्षा की है। तुम एक-बार हमारे घर तक चलनेकी कृपा करो।" डाकूने उत्तर दिया—"मैं गाँवमें नहीं जा सकता, मैं तो तुम्हें केवल रस्ता बतलाने आया था।"

१५—मुक्त-पुरुष संसारमें सूखे पत्तेके समान रहते हैं। उन्हें कोई निजी इच्छा या अभिमान नहीं रहता। हवा उसे जिस ओर उड़ा ले जाती है, वह उसी ओर उड़ जाता है।

१६—अनाजको ज़मीनमें बोओ तो उससे अङ्कुर निकल आते हैं और पेड़ तैयार हो जाता है, किन्तु उसी अनाजको उबाल कर बोओ, तो फिर उससे अङ्कुर नहीं निकलते। इसी प्रकार जो सिद्ध हो जाते हैं, उनको फिर इस संसारमें जन्मग्रहण नहीं करना पड़ता।

१७—परमहंस किसे कहते हैं? जैसे हंसको दूध पानी एक साथ मिला कर दो, तो वह दूधको पी लेता है और पानीको छोड़ देता है। इसी प्रकार जो व्यक्ति संसारके सार पदार्थ

सच्चिदानन्द को ग्रहण करके, असार संसारको त्याग देवे वही परमहंस है।

१८—पहले अज्ञान, फिर ज्ञान और अन्तमें जब सच्चिदानन्द लाभ हो जाता है; तब ज्ञान, अज्ञान दोनोंके आगे जाना पड़ता है। जैसे जब पैरमें कांटा लग जाता है तब उसे निकालनेके लिये एक और कांटेकी आवश्यकता पड़ती है, किन्तु जब कांटा निकल जाता है तब दोनों कांटे फेंक दिये जाते हैं।

१९—जो व्यक्ति सिद्धि लाभ करते हैं अर्थात् जिन्हें ईश्वरका साक्षात्कार हो जाता है, उनके द्वारा कभी किसी प्रकारका अन्याय-कार्य्य नहीं हो सकता; जैसे जो नाचना जानता है, उसका पैर कभी बेताला नहीं गिरता।

बृहस्पतिके पुत्र कच को समाधिभङ्ग होनेपर, जब उनका मन बहिर्जगत् में आगया तब उनसे ऋषियोंने पूछा—"इस समय तुम्हें कैसी अनुभूति होती है?" उसने उत्तर दिया—"सर्व्वं ब्रह्ममयं—" उसके सिवा और कुछ भी नहीं दिखाई देता।

२१—जैसे पानीमें कमलपत्र रहता है, परन्तु उसमें जल नहीं लगता। यदि कुछ जल लग भी जाय तो ज़रा हिला देनेसे सब झड़ जाता है, उसी प्रकार संसारमें मुक्तपुरुष रहते हैं। उन्हें संसारकी माया नहीं लगती, यदि कुछ लग भी जाय तो इच्छा करते ही वह सब छूट जाती है।

सर्व-धर्म्म-समन्वय।

१—जैसे गैसका उजेला एक स्थानसे आकर शहरके भिन्न-भिन्न स्थानोंमें भिन्न-भिन्न रूपसे जलता है, उसी प्रकार नाना देशोंके नाना जातिके लोग उसी एक परमात्मासे प्रकट होते हैं।

२—जैसे छतपर चढ़नेके लिये नसेनी, ज़ीना, रस्सी, बाँस आदि नाना उपायोंको काममें लाते हैं। कोई किसी उपायसे चढ़ता है और कोई किसी उपायसे, उसी प्रकार एक ईश्वरके पास जानेके लिये अनेक उपाय हैं। प्रत्येक धर्म एक एक उपाय है।

३—ईश्वर एक है, किन्तु उसके नाम और भाव अनेक हैं। उसे जो जिस नाम और भावसे पुकारता है, वह उसे उसी भावसे दिखाई देता है।

४—जो मनुष्य जिस भावसे—फिर वह किसी नाम और किसी रूपका क्यों न हो—उस सच्चिदानन्द परमात्माका भजन करता है, वह उसे अवश्य पाता है।

५—जितने मत, उतनेही मार्ग हैं। जैसे काली के मन्दिरको आनेके लिये कोई नौका से, कोई गाड़ीसे और कोई

पैदल मार्गसे आते हैं, उसी प्रकार भिन्न-भिन्न मतोंके द्वारा भिन्न-भिन्न लोग एक सच्चिदानन्दको प्राप्त करते हैं।

६—माताका प्रेम सब बच्चों पर समान होनेपर भी, आवश्यकतानुसार, वह किसी बच्चेको पूड़ी, किसीको रोटी और किसीको मिठाई देती है। इसी प्रकार भगवान् भी भिन्न-भिन्न साधकोंकी शक्ति और अवस्थाके अनुरूप साधनकी व्यवस्था करते हैं।

७—महात्मा केशवचन्द्रसेनने परमहंसजी से पूछा—"जब भगवान् एकही हैं, तब इन सब धर्मसम्प्रदायोंमें परस्पर इतना मतभेद और वैमनस्य क्यों रहता है?" परमहंसजीने उत्तर दिया—"जैसे इस पृथ्वी पर यह हमारी ज़मीन है—यह हमारा घर है—यह हमारा खेत है आदि कहकर लोग उसे दीवार या बाड़ी आदिसे घेर लेते है, किन्तु ऊपर भी एक अनन्त आकाश रहता है, उसे कोई नहीं घेर सकते। इसी प्रकार मनुष्य अज्ञानवश अपने-अपने धर्मको श्रेष्ठ कहकर व्यर्थही गोलमाल किया करते है। जब सत्य ज्ञान हो जाता है, तब परस्पर-वाद विवाद नहीं रहता।

८—जिसके भाव संकीर्ण होते हैं वह अन्य धर्म्मोंकी निन्दा करता और अपने धर्मको श्रेष्ठ बतलाता है। किन्तु जो ईश्वरानुरागी होते है वे केवल साधन-भजन किया करते है। उन्हें वाद-विवादसे कुछ मतलब नहीं रहता।

९—भगवान् एक हैं, किन्तु साधक और भक्तगण अपने-

अपने भाव और रुचिके अनुसार उसकी उपासना किया करते हैं। जैसे दूधको कोई मनुष्य कच्चा पीते हैं, कोई गरम करके और शक्कर डालकर पीते हैं और कोई खोवा बनाकर खाते हैं, इसी प्रकार जिसकी जैसी रुचि होती है वह उसी भावसे भगवान्‌को पूजा और उपासना किया करता है।

१०—जैसे जल एक पदार्थ है, किन्तु देश, काल और पात्रके भेदसे वह भिन्न भिन्न नामोंसे पुकारा जाता है। संस्कृतमें उसे जल, हिन्दीमें पानी, फारसीमें आब और अँगरेज़ीमें वॉटर कहते हैं। परस्परकी भाषा जाने बिना कोई किसीकी बात नहीं समझ सकता, किन्तु जानने पर भावमें किसी प्रकारका व्यतिक्रम नहीं होता।

११—भगवान्‌का भजन किसी प्रकार क्यों न करो, किन्तु उससे कल्याण ही होगा। जैसे मिस्रीकी रोटीको चाहे सीधी करके खाओ, चाहे आड़ी करके खाओ, किन्तु वह मीठी ही लगेगी।

कर्म्म-फल ।

—:o:—

१—पाप और पारेको कोई हज़म नहीं कर सकता। यदि कोई मनुष्य छिपकर पारा खाले तो एक न एक दिन वह पारा उसके शरीरसे फूट निकलेगा। इसी प्रकार पाप करनेसे एक न एक दिन उसका फल भोगना ही पड़ता है।

२—कुसेरेका कीड़ा अपने मुँहकी रालसे अपना घर बनाता है और उसीमें बन्दी हो जाता है। उसी प्रकार संसारी जीव अपने कर्मों से आप ही बद्ध होते हैं। जब उस कीड़े के बच्चा पैदा होता है तब वह उस कुसेरेको काटकर बाहर निकल आता है। इसी प्रकार विवेक-वैराग्य उत्पन्न होते ही जीव अपने उद्योग से मुक्त हो जाता है।

युगधर्म।

१—परमहंसजी सदैव कहा करते थे—"सवेरे और सन्ध्या समय ताली बजाकर राम नाम जपनेसे सब पाप-ताप छूट जाते हैं। जैसे वृक्षके नीचे खड़े होकर ताली बजानेसे वृक्ष पर से सब पक्षी भाग जाते हैं, उसी प्रकार ताली बजाकर राम नाम जपनेसे इस देहरूपी वृक्षके सब अविद्यारूपी पक्षी उड़ जाते हैं।

२—पहले लोगोंको जब सामान्यत: ज्वर आता था, तब वे मामूली पाचन आदि खाकर ही उससे छुट्टी पा जाते थे; किन्तु अब जैसा मलेरिया ज्वर है वैसी ही उसके लिये कुनैन औषध है। आगेके मनुष्य योग, तपस्या आदि किया करते थे; अब कलयुगी मनुष्य अन्नगतप्राण और अशक्त होते हैं; वे केवल एकाग्र मनसे हरिनाम लेनेसे ही समस्त सांसारिक व्याधियों से मुक्त हो जाते हैं।

३—जान-बूझकर, अनजाने अथवा भ्रान्तिसे किसी प्रकार भी हरिनाम जपो, उसका फल अवश्य मिलेगा। जो शरीरमें तेलकी मालिश करके नदीमें नहाने जाता है उसका भी स्नान हो जाता है, और जिस मनुष्यको धक्का देकर नदीमें गिरा दो

उसका भी स्नान हो जाता है। इसी प्रकार जो मनुष्य अपने घरमें शय्या पर सो रहा है उस पर पानी डाल दो, तो उसका भी स्नान हो जाता है।

४—अमृतकुण्डमें एक बार किसी प्रकार डुबकी लगाते ही अमरत्व प्राप्त हो जाता है। जो लोग स्तव-स्तोत्र पढ़कर उसमें कूदते हैं वे भी अमर हो जाते हैं और जो सहसा भूलसे उस अमृतकुण्डमें गिर पड़ते हैं वे भी अमर हो जाते है। इस प्रकार भगवान्‌का नाम जान, अजान या भूलसे किसी प्रकार भी क्यों न लो, परंतु उसका फल अवश्य ही मिलता है।

५—इस कलियुगमें नारदीय भक्ति-मार्ग ही प्रशस्त है। अन्य युगोंमें नाना प्रकारकी कठोर तपस्यायें करना पड़ती थीं, किन्तु उन सब कठोर साधनाओंके द्वारा इस युगमें सिद्धि पाना कठिन है। इस युगमें एक तो मनुष्यकी परमायु ही अल्प होती है, उस पर रोग-शोक भी उसे रात-दिन सताया करते हैं। ऐसी स्थितिमें कठोर तपस्या कैसे की जा सकती है?

धर्म्म-प्रचार।

१—साधु महापुरुषों का सम्मान जितना दूर वाले करते हैं उतना समीपवर्त्ती लोग नहीं करते। इसका कारण क्या है?—जैसे बाज़ीगरका तमाशा उसके साथ वाले नहीं देखते हैं, किन्तु दूर-दूरके लोग उसका तमाशा देखकर मुग्ध हो जाते हैं।

२—बरगदका बीज जब पक कर गिरता है, तो वह पेड़के नीचे नहीं गिरता—उचटकर दूर गिरता है और वहीं वृक्ष उत्पन्न करता है। इसी प्रकार धर्म-प्रचारकोंका भाव भी दूर ही प्रकाशित और सम्मानित होता है।

३—लालटेनके नीचे अँधेरा रहता है और दूर प्रकाश पड़ता है। इसी प्रकार साधु-सन्तों और महापुरुषोंके समीपवर्त्ती मनुष्य उनका कुछ महत्त्व नहीं जान पाते और दूर-दूरके मनुष्य उनके भाव और उपदेशको सुनकर मुग्ध हो जाते हैं।

४—अपने आपको मारनेके लिए एक छोटीसी छुरी ही बस है, किन्तु दूसरोंको मारनेके लिए ढाल और तलवार की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार स्वतः धर्मलाभ करनेके लिए एक बात पर विश्वास कर लेने से ही काम चल जाता

है—धर्मलाभ हो जाता है, किन्तु दूसरों को उपदेश देने और धर्मलाभ करानेके लिए अनेक शास्त्रोंके पढ़ने और अनेक युक्तियों और प्रमाणोंके देनेकी आवश्यकता पड़ती है।

५—इस देशमें जब लोग अनाज मापनेके लिए बैठते हैं, तब एक आदमी मापने वालेके पीछे बैठा रहता है। ज्योंही मापनेवाले के सामने अनाज की कमी दिखाई देती है, त्यों-ही वह अनाज की राशिमें से कुछ अनाज उसके सामने हाथों से ढकेल कर इकट्ठा कर देता है। इसी प्रकार सच्चे साधु-सन्त जब ईश्वर की चर्चा या महिमा वर्णन करने बैठते हैं और जब उनकी बात पूरी होने को आती है तब उनके हृदयमें और भी कई भाव प्रकट हो जाते हैं। उनके भावोंमें कभी कमी नहीं होने पाती।